खण्ड (क)

इकाई-1

भारत : संसाधन एवं उपयोग

संसाधन का महत्व :

आप अपने जीवन में अनेक वस्तुओं का उपयोग करते हैं। उपयोग में आने वाली ये सभी वस्तुएँ संसाधन हैं। संसाधन भौतिक और जैविक दोनों हो सकते हैं। जहाँ तक एक ओर भूमि, मृदा, जल, खनिज जैसे भौतिक पदार्थ मानवीय आकांक्षाओं की पूर्ति में सहायक होकर संसाधन बन जाते हैं, वहीं दूसरी ओर जैविक पदार्थ, यथा, वनस्पति, वन्य-जीव तथा जलीय-जीव, मानवीय-जीवन को सुखमय बनाने में पीछे नहीं हैं।

उपरोक्त भौतिक एवं जैविक दोनों पदार्थ तकनीक के सहारे ही जीवनोपयोगी हो पाते हैं। अनादि काल से ही अरण्यों में वनस्पति एवं वन्य जीव उपलब्ध थे। जलाशय एवं सागरों में जलीय-जीव लाखों वर्ष पूर्व से विचरण करते रहे हैं। सदियों से ही कोयला, पेट्रोलियम एवं अन्य खनिज पृथ्वी के गर्भ में पड़ा हुआ था। किन्तु उस समय के आदि मानव में तकनीक (ज्ञान) का अभाव था। धीरे-धीरे जनसंख्या एवं आवश्यकताओं में वृद्धि होती गयी। इस वृद्धि ने मानव के ज्ञानार्जन की दर में त्वरित वृद्धि किया। इतना ही नहीं, आदि मानव तकनीक को पाकर ज्ञानी मानव बन गया। पर्यावरण में उपलब्ध पदार्थों का जनप्रिय तकनीक के सहारे जीवन को सुखमय बनाने में मानव सक्षम हो गया। जब पर्यावरण में मानव द्वारा जनप्रिय तकनीक का प्रयोग होता है तब सभ्यता विकसित होती है। अंततः मानवीय जीवन-निर्वाह के तौर-तरीके सांस्कृतिक संसाधन की स्थिति को प्राप्त कर लेते हैं।

वस्तुतः, संसाधन का अर्थ बहुत ही व्यापक है। यहाँ प्रसिद्ध भूगोलविद, **'जिम्मरमैन'** का कथन उल्लेखनीय है– **''संसाधन होते नहीं; बनते हैं।''**

वर्तमान परिवेश में सेवा को भी संसाधन माना गया है। कोई गायक या कवि या चित्रकार अपने क्रिया-कलाप से धनार्जन या स्वयं को संतुष्ट करता है, तब उनके द्वारा ये कार्य-कलाप भी

संसाधन कहलाऐंगे। कवि का कविता-रचना, चित्रकार की चित्रकारी, गायक की गायिकी भी संसाधन हैं। सच तो यह है कि मानव स्वयं भी संसाधन है। क्योंकि, इनके पास ज्ञान (तकनीक) होता है, जिसके सहारे वह किसी भी वस्तु को उपयोगी बना सकता है। अतः यह धारणा भ्रामक है कि संसाधन एक प्राकृतिक उपहार है।

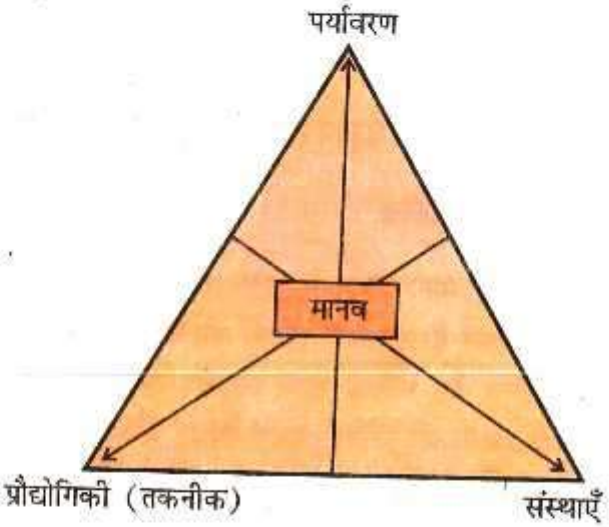

चित्र 1.1 मानव का पर्यावरण, प्रौद्योगिकी एवं संस्थाओं के साथ संबंध

संसाधन किसी भी देश का आर्थिक- सामाजिक मेरूदंड होता है। संसाधन विपन्न राष्ट्र अंतर्राष्ट्रीय दौड़ में पिछड़ जाते हैं। इसका मतलब यह नहीं है कि प्राकृतिक संसाधन से सम्पन्न राष्ट्र ही विकास करते हैं। जापान एक ऐसा देश है; जो प्राकृतिक संसाधन में अत्यंत विपन्न है। किन्तु, इनके मानव संसाधन, तकनीकी दृष्टि से, इतने सबल हैं कि यह देश उपलब्ध सभी पदार्थों का विवेकपूर्ण उपयोग कर विकसित देशों की श्रेणी में खड़ा है। अतः किसी देश के विकास में भौतिक एवं जैविक संसाधन के साथ-साथ मानव-संसाधन की भी बहुत भूमिका होती है। विविध संसाधनों के मध्य मानव नियंत्रक की स्थिति में रहता है; जो पर्यावरण में उपलब्ध पदार्थों, प्रौद्योगिकी (तकनीक) एवं संस्थाओं के बीच अन्तर्संबंध स्थापित करता है, जिससे पर्यावरण के पदार्थ उपयोगी बन जाते हैं। इसे चित्र संख्या 1.1 से समझा जासकता है।

संसाधनों का वर्गीकरण :

संसाधनों के वर्गीकरण के निम्नलिखित आधार हैं :

A. उत्पत्ति के आधार पर-जैव और अजैव।

B. उपयोगिता के आधार पर-नवीकरणीय और अनवीकरणीय।

C. स्वामित्व के आधार पर-व्यक्तिगत, सामुदायिक, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय।

D. विकास की स्थिति के आधार पर–संभाव्य, विकसित, भंडार और संचित।

दिये गये चार्ट की मदद से भी संसाधन को समझा जा सकता है।

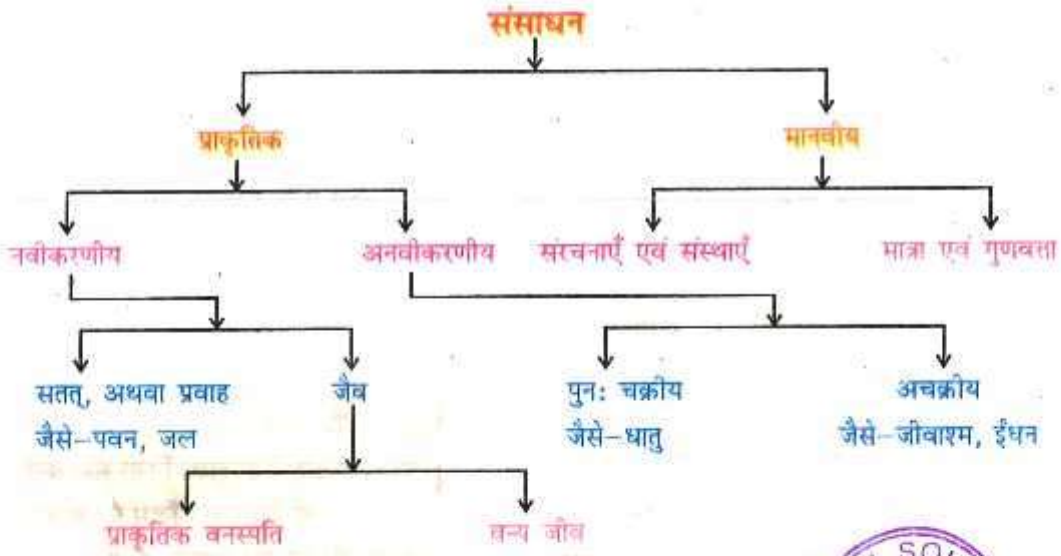

चित्र 1.2 संसाधनों का वर्गीकरण

ABDIEL SOLUTIONS ABSOL PATNA

संसाधनों के प्रकार :

➔ **उत्पत्ति के आधार पर संसाधन के दो प्रकार हो सकते हैं :**

- **जैव संसाधन :** ऐसे संसाधनों की प्राप्ति जैव मंडल से होती है। इनमें सजीव के सभी लक्षण मौजूद होते हैं। जैसे–मुनष्य, वनस्पति, मत्स्य, पशुधन एवं अन्य प्राणि समुदाय।
- **अजैव संसाधन :** निर्जीव वस्तुओं के समूह को अजैव संसाधन कहा जाता है। जैसे–चट्टानें, धातु एवं खनिज आदि।

➡ उपयोगिता के आधार पर संसाधन के दो वर्ग होते हैं :

- **नवीकरणीय संसाधन :** वैसे संसाधन जिन्हें भौतिक, रासायनिक या यांत्रिक प्रक्रिया द्वारा नवीकृत या पुनः प्राप्त किये जा सकते हैं। जैसे–सौर-ऊर्जा, पवन ऊर्जा, जल, विद्युत, वन एवं वन्य प्राणी। जिन्हें सतत् या प्रवाह एवं जैव संसाधनों में वर्गीकृत किया जा सकता है। चित्र-1.2

- **अनवीकरणीय संसाधन :** ऐसे संसाधनों का विकास लंबी अवधि में जटिल प्रक्रियाओं द्वारा होता है। इस प्रक्रिया को पूरा होने में लाखों वर्ष लग सकते हैं। इनमें कुछ ऐसे भी संसाधन होते हैं, जो पुनः चक्रिय नहीं हैं। एक बार प्रयोग होने के साथ ही वे समाप्त हो जाते हैं। जैसे–जीवाश्म ईंधन।

➡ स्वामित्व के आधार पर संसाधन के चार प्रकार हो सकते हैं :

- **व्यक्तिगत संसाधन :** ऐसे संसाधन किसी खास व्यक्ति के अधिकार क्षेत्र में होता है। जिसके बदले में वे सरकार को लगान भी चुकाते है। जैसे–भूखंड, घर व अन्य जायदाद; जिसपर लोगों का निजी स्वामित्व होता है। बाग-बगीचा, तालाब, कुआँ इत्यादि भी ऐसे संसाधन ही हैं, जिस पर व्यक्ति निजी स्वामित्व रखता है।

क्रिया-कलाप :
अपने परिवार में उपलब्ध निजी संसाधनों की एक सूची तैयार करें जिस पर केवल तुम्हारे परिवार का हक हो।

- **सामुदायिक संसाधन :** ऐसे संसाधन किसी खास समुदाय के आधिपत्य में होता है, जिसका उपयोग समूह के लिए सुलभ होता है। गाँवों में चारण-भूमि, श्मशान, मंदिर या मस्जिद परिसर, सामुदायिक भवन, तालाब आदि। नगरीय क्षेत्र में इस प्रकार के संसाधन : सार्वजनिक पार्क, पिकनिक स्थल, खेल मैदान, मंदिर, मस्जिद, गुरूद्वारा एवं गिरिजाघर के रूप में हैं ये संसाधन सम्बन्धित समुदाय के लोगों के लिए सर्वसुलभ होते हैं।

- **राष्ट्रीय संसाधन :** कानूनी तौर पर देश या राष्ट्र के अन्तर्गत सभी उपलब्ध संसाधन राष्ट्रीय हैं। देश की सरकार को वैधानिक हक है कि वे व्यक्तिगत संसाधनों का अधिग्रहण आम जनता के हित में कर सकती है।

> **क्या आप जानते हैं ?**
> किसी राजनीतिक सीमा के अंतर्गत भूमि, खनिज पदार्थ, जल संसाधन, वन व वन्यजीव एवं समुद्री जीव (200 कि०मी० महासागरीय क्षेत्र तक) राष्ट्रीय संसाधन हैं।

आपने अपने गाँवों में या आसपास के क्षेत्रों में भी शहरी विकास प्राधिकरण का बोर्ड देखा होगा। इसे सरकार ने भूमि अधिग्रहित करने हेतु अधिकृत किया है। ये भूमि सहित अन्य नगरीय संसाधनों का विकास करते हैं।

- **अंतर्राष्ट्रीय संसाधन :** ऐसे संसाधनों का नियंत्रण अंतर्राष्ट्रीय संस्था करती है। तट रेखा से 200 कि०मी० की दूरी छोड़कर खुले महासागरीय संसाधनों पर किसी देश का अधिपत्य नहीं होता है। ऐसे संसाधन का उपयोग सिर्फ अनुसंधान हेतु अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं की सहमति से किसी राष्ट्र द्वारा किया जा सकता है।

> **क्या आप जानते हैं ?**
> किसी देश की तट रेखा से 200 कि०मी० की दूरी तक का क्षेत्र 'अपवर्जक आर्थिक क्षेत्र' के नाम से जाना जाता है।

➡ **विकास के स्तर पर भी संसाधन को चार भागों में वर्गीकृत किया जाता है :**

- **संभावी संसाधन :** ऐसे संसाधन जो किसी क्षेत्र विशेष में मौजूद होते हैं, जिसे उपयोग में लाये जाने की संभावना रहती है। इसका उपयोग अभी तक नहीं किया गया है। जैसे–हिमालयी क्षेत्र का खनिज, जिनका उत्खनन अधिक गहराई में होने के कारण दुर्गम एवं महँगा है। उसी प्रकार राजस्थान एवं गुजरात क्षेत्र में पवन और सौर–उर्जा की असीम संभावनायें हैं, परन्तु अभी तक इनका सही रूप से विकास नहीं हो पाया है।

> **क्या आप जानते हैं ?**
> गुजरात के भुज में सौर ऊर्जा का आधुनिक उपक्रम बड़े स्तर पर लगाया जा रहा है।

- **विकसित संसाधन :** ऐसे संसाधन जिनका सर्वेक्षणोपरांत उपयोग हेतु मात्रा एवं गुणवत्ता का निर्धारण हो चुका है। पूर्व में भी यह

बताया जा चुका है कि संसाधनों का विकास तकनीक और उनकी संभाव्यता पर निर्भर है।

भंडार संसाधन : ऐसे संसाधन पर्यावरण में उपलब्ध होते हैं तथा मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति में सक्षम हैं। उपयोग हेतु उपयुक्त प्रोद्यौगिकी के अभाव में इन्हें केवल भंडारित संसाधन के रूप में देखा जाता है। उदाहरणार्थ-जल, हाइड्रोजन एवं ऑक्सीजन का यौगिक है, जिसमें ऊर्जा उत्पादन की असीम क्षमता छिपी हुई है । लेकिन उच्च तकनीक के अभाव में ऐसे संसाधनों का उपयोग नहीं कर पा रहे हैं।

क्रिया-कलाप :
अपने आस-पास के क्षेत्रों का निरीक्षण कर संभाव्य एवं संचित कोष संसाधन की एक सूची तैयार करें।

संचित कोष संसाधन : वास्तव में ऐसे संसाधान भंडार संसाधन के ही अंश हैं, जिसे उपलब्ध तकनीक के आधार पर प्रयोग में लाया जा सकता है। इनका तत्काल उपयोग प्रारंभ नहीं हुआ है। यह भविष्य की पूँजी है। नदी जल भविष्य में जल-विद्युत उत्पन्न करने में उपयुक्त हो सकते हैं। वर्तमान में इसका उपयोग अत्यंत ही सीमित है। ऐसे संसाधन वन में या बाँधों में जल के रूप में संचित हैं।

संसाधन नियोजन :

संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग ही संसाधन नियोजन है। वर्तमान परिवेश में संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग हमारे सामने चुनौती बनकर खड़ा है। संसाधनों के विवेकपूर्ण दोहन हेतु सर्वमान्य रणनीति तैयार करना संसाधन नियोजन की प्रथम प्राथमिकता है।

क्रिया-कलाप :
प्रदेश के अंदर पाये जाने वाले खनिजों के उत्खनन एवं भण्डार क्षेत्र की सूची तैयार कीजिए।

संसाधन नियोजन किसी भी राष्ट्र के विकास के लिए आवश्यक होता है। भारत जैसे देश के लिए तो यह अपरिहार्य है, जहाँ संसाधन की उपलब्धता में अत्यधिक विविधता के साथ-साथ सघन जनसंख्या व्याप्त है। यहाँ कई ऐसे प्रदेश हैं जो संसाधन सम्पन्न हैं। कई ऐसे भी प्रदेश हैं जो संसाधन की दृष्टि से काफी विपन्न हैं। कुछ ऐसे भी प्रदेश हैं जहाँ एक ही प्रकार के संसाधनों का प्रचुर भंडार है और अन्य दूसरे संसाधनों में वह गरीब हैं। जैसे–झारखंड, म०प्र० और छत्तीसगढ़

आदि ऐसे प्रदेश हैं, जहाँ खनिज एवं कोयला का प्रचुर भंडार है। उसी प्रकार बिहार भी चूना-पत्थर एवं पाइराईट जैसे खनिजों में धनी है। अरूणाचल प्रदेश में जल संसाधन प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं। परन्तु कतिपय कारणों से उसका विकास नहीं हो पाया है। राजस्थान में सौर-ऊर्जा के साथ-साथ पवन ऊर्जा की प्रचुरता है। परन्तु यह राज्य जल संसाधन की दृष्टि से अति निर्धन है। भारत के अंतर्गत लद्दाख जैसे भी क्षेत्र हैं, जो शीत मरूस्थल के रूप में अन्य भागों से अलग-थलग हो गया है। लेकिन यह प्रदेश सांस्कृतिक विरासत का धनी है। यहाँ जल, महत्वपूर्ण खनिज एवं मौलिक अवसंरचना की बहुत कमी है। अतः राष्ट्रीय, प्रांतीय तथा अन्य स्थानीय स्तरों पर संसाधनों के समायोजन एवं संतुलन के लिए संसाधन-नियोजन की अनिवार्य आवश्यकता है।

भारत में संसाधन-नियोजन :

संसाधन-नियोजन एक जटिल प्रक्रिया है। इसके लिए आवश्यक क्रिया-कलाप की आवश्यकता होती है। ये क्रिया-कलाप संसाधन-नियोजन के सोपान होते हैं। इन सोपानों के सहारे किसी देश के उपलब्ध संसाधन का सदुपयोग कर उस देश की उन्नति का मार्ग प्रशस्त किया जा सकता है।

संसाधन नियोजन के सोपानों को निम्न रूप में बाँटकर अध्ययन किया जा सकता है। :

(क) देश के विभिन्न प्रदेशों में संसाधनों की पहचान कराने के लिए सर्वेक्षण कराना।

(ख) सर्वेक्षणोपरांत, मानचित्र तैयार करना एवं संसाधनों का गुणात्मक एवं मात्रात्मक आधार पर मापन या आकलन करना।

(ग) संसाधन-विकास योजनाओं को मूर्त्त-रूप देने के लिए उपयुक्त प्रौद्योगिकी, कौशल एवं संस्थागत, नियोजन की रूप रेखा तैयार करना।

(घ) राष्ट्रीय विकास योजना एवं संसाधन विकास योजनाओं के मध्य समन्वय स्थापित करना।

ज्ञात कीजिए :
बिहार राज्य में सामूहिक भागीदारी की सहायता से आपके आस-पास में संसाधन विकास के कौन-कौन कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं ?

DIEL SOLUTIONS ABSOL

हमारे देश में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से ही संसाधन-नियोजन के लक्षित उद्देश्यों को हासिल करने का प्रयास किया जा रहा है। इस संदर्भ में भारत सरकार प्रथम पंचवर्षीय योजना से ही प्रयासरत है। किसी भी इकाई पर विकास हेतु संसाधन एक आवश्यक शर्त है। किन्तु, प्रौद्योगिकी एवं संस्थानों में वांछित परिवर्तन के अभाव में केवल संसाधनों की उपलब्धता से विकास संभव नहीं है। आज भी हमारे देश में ऐसे कई राज्य हैं, जहाँ संसाधन की प्रचुरता के बाद भी आर्थिक रूप से पिछड़े राज्य में इनकी गणना की जाती है। इसके विपरीत कुछ ऐसे भी राज्य हैं, जो संसाधन के अभाव में भी आर्थिक रूप से विकसित हैं।

संसाधनों का संरक्षण :

सभ्यता एवं संस्कृति के विकास में संसाधनों की अहम् भूमिका होती है। किन्तु, संसाधनों का अविवेकपूर्ण या अतिशय उपयोग विविध प्रकार के सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं पर्यावरणीय समस्याओं को जन्म देते हैं। इन समस्याओं के समाधान हेतु विभिन्न स्तरों पर संरक्षण की आवश्यकता है। संसाधनों का नियोजित एवं विवेकपूर्ण उपयोग ही संरक्षण कहलाता है।

क्रिया-कलाप :
ऐसे प्रदेशों को ज्ञात कीजिये जो संसाधन की दृष्टि से सम्पन्न एवं आर्थिक रूप से विपन्न हैं। इसके लिए अपने शिक्षक से भी मदद लें।

प्राचीन काल से ही संसाधनों का संरक्षण, समाज-सुधारकों, नेताओं, चिंतकों एवं पर्यावरणविदों के लिए एक चिन्तनीय ज्वलंत विषय रहा है। इस संदर्भ में महान् दार्शनिक एवं चिंतक **महात्मा-गाँधी** के विचार प्रासांगिक है-

"हमारे पास पेट भरने के लिए बहुत कुछ हैं, लेकिन पेटी भरने के लिए नहीं।"

मेधा पाटेकर का **'नर्मदा बचाओ अभियान'**, सुन्दर लाल बहुगुणा का **'चिपको आंदोलन'**, एवं संदीप पांडेय द्वारा वर्षा-जल संचय कर कृषित भूमि का विस्तार , संसाधन संरक्षण की दिशा में अत्यंत सराहनीय कदम है।

गाँधी जी जैसे कई चिंतकों का मानना है कि मानव का स्वार्थी और लालची प्रवृत्ति तथा अत्याधुनिक तकनीक की शोषणात्मक क्रिया-कलाप संसाधन के तीव्रतम ह्रास के लिए मजबूर कर

देता है। गाँधीजी मशीन द्वारा उत्पादन के घोर विरोधी थे। वे बड़े जनसमुदाय द्वारा उत्पादों के उत्पादन के समर्थक थे, जिससे एक बड़ी आबादी को बेरोजगारी जैसे सामाजिक कोढ़ से बचाया जा सके। उनका मानना था कि इस प्रक्रिया में श्रमिकों में कार्य-दक्षता के विकास में वृद्धि होगी और संसाधनों के विदोहन पर भी विराम लग सकेगा।

क्या आप जानते हैं ?
मानव एवं तकनीक की शोषणात्मक दोहन प्रवृत्ति डाकूओं की अर्थव्यवस्था (Robber's Economy) कहा जाता है।

संसाधन के संरक्षण हेतु अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अनेक सम्मेलन हुए हैं। सर्वप्रथम 1968 ई० में 'क्लब ऑफ रोम' ने इसकी वकालत की थी। 1974 ई० में शुमशेर की पुस्तक 'स्मॉल इज ब्यूटीफूल' में इससे संबंधित गाँधीजी के विचार प्रकाशित हुए। ब्रंटलैण्ड आयोग द्वारा प्रस्तुत 1987 का प्रतिवेदन भी संसाधन-संरक्षण के संबंध में विश्व-जगत् की दृष्टि खोलने में कारगर सिद्ध हुआ। इसमें सतत् विकास (Sustainable Development) की संकल्पना के साथ-साथ संसाधन संरक्षण पर बल दिया गया है। इसी रिपोर्ट को बाद में हमारा साझा भविष्य (Our Common Future) शीर्षक से भी दस्तावेज प्रकाशित किया गया। रियो-डी-जेनेरो (ब्राजील) में 1992 ई० में आयोजित पृथ्वी सम्मेलन भी इस संदर्भ में एक सुनियोजित प्रयास था। पुनः 1997 ई० में न्यूयार्क में द्वितीय पृथ्वी सम्मेलन तथा 2002 में जोहान्सबर्ग में आयोजित तृतीय पृथ्वी सम्मेलन संसाधन संरक्षण की दिशा में विश्व स्तरीय सराहनीय प्रयास है ।

क्या आप जानते हैं ?
पर्यावरण संरक्षण हेतु सर्वप्रथम स्टॉकहोम में विश्व शिखर सम्मेलन 1972 ई० में आयोजित हुआ था। इसी सम्मेलन के पश्चात् प्रतिवर्ष 5 जून को **पर्यावरण दिवस** के रूप में भी मनाया जाता है।

ABSOL ABDIEL SOLUTIONS PATNA

सतत् विकास की अवधारणा :

संसाधन मनुष्य के जीविका का आधार है। जीवन की गुणवत्ता बनाये रखने के लिए संसाधनों के सतत् विकास की अवधारणा अत्यावश्यक है। 'संसाधन प्रकृति-प्रदत्त उपहार है' की अवधारणा के कारण मानव ने इनका अंधा-धुंध दोहन किया, जिसके कारण पर्यावरणीय समस्याएँ भी उत्पन्न हो गयी हैं।

व्यक्ति के लालच-लिप्सा ने संसाधनों का तीव्रतम दोहन कर संसाधनों के भण्डार में चिंतनीय ह्रास ला दिया है। संसाधनों का केन्द्रीकरण (Centralization) खास लोगों के हाथों में आने से समाज दो स्पष्ट भागों में (सम्पन्न एवं विपन्न) बँट गया है।

सम्पन्न लोगों द्वारा स्वार्थ के वशीभूत होकर संसाधनों का विवेकहीन दोहन किया गया। जिससे विश्व पारिस्थितिकी में घोर संकट की स्थिति उत्पन्न हो गई है। भूमंडलीय तापन, ओजोन क्षय, पर्यावरण-प्रदूषण, मृदा-क्षरण, भूमि-विस्थापन, अम्लीय-वर्षा, असमय ऋतु-परिवर्तन जैसी पारिस्थितिकी-संकट पृथ्वी पर व्याप्त सभ्यता-संस्कृति को निगल जाने को तैयार है। अगर इन स्वार्थी तत्त्वों या देशों द्वारा अनवरत-विदोहन चलता रहा तो पृथ्वी का जैव-संसार विनाश के आगोश में समा जाएगा।

उपरोक्त परिस्थितियों से निजात पाने एवं विश्व-शांति के साथ जैव जगत् को गुणवत्तापूर्ण जीवन लौटाने के लिए सर्वप्रथम समाज में संसाधनों का न्याय-संगत बँटवारा अपरिहार्य है। दूसरे शब्दों में संसाधनों का नियोजित उपयोग होना आवश्यक है। इससे पर्यावरण को बिना क्षति पहुँचाये, भविष्य की आवश्यकताओं के मद्देनजर, वर्त्तमान विकास को कायम रखा जा सकता है । ऐसी धारणा ही सतत विकास (Sustainable Development) कही जाती है। इससे वर्त्तमान विकास के साथ भविष्य भी सुरक्षित रह सकता है।

स्मरणीय तथ्य :

- **प्रथम पृथ्वी सम्मेलन** का आयोजन 3-14 जून 1992 को रियो-डी-जेनेरो में किया गया। जिसमें विकसित एवं विकासशील देशों के लगभग 178 प्रतिनिधियों ने भाग लिया। इस सम्मेलन में ग्लोबल-वार्मिंग, वन-संरक्षण, जैव-विविधता, कार्यक्रम 21, एवं रियो घोषणा-पत्र पर समझौता किए गए।
- **कार्यक्रम 21 (Agenda 21) :-** संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण और विकास (UNCED) के तत्वाधान में रियो-डी-जेनेरो सम्मेलन में राष्ट्राध्यक्षों द्वारा स्वीकृत 800 पृष्ठीय एक घोषणा-पत्र है जिसमें सतत् विकास को प्राप्त करने के लिए 21 कार्यक्रम को

स्वीकृत किया गया इस एजेंडा-21 को गठित करने हेतु सभी देशों को निर्देश दिये गये तथा इस पर होने वाले खर्च के वहन हेतु 'विश्व पर्यावरण कोष' की स्थापना की गई है।

- **द्वितीय पृथ्वी सम्मेलन** का आयोजन 23-27 जून 1997 को न्यूयार्क में प्रथम सम्मेलन के मूल्यांकन के लिए 5 वर्ष बाद आयोजित हुआ। इसे प्लस-5 सम्मेलन भी कहा जाता है।

- **क्योटो सम्मेलन**-दिसम्बर 1997 में पृथ्वी को ग्लोबल वार्मिंग से बचाने के लिए जापान के क्योटो में सम्मेलन आयोजित हुए जिसमें 159 देशों ने भाग लिया। इसमें 6 गैसों (Co_2, मिथेन, N_2o, HFC, पर फ्लूरो कार्बन, सल्फर हेक्सा क्लोराईड) को ग्लोबल वार्मिंग के लिए जिम्मेवार-मानते हुए इसके उपयोग में कटौती पर सहमति बनी। जहाँ यूरोपीय संघ ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन में 8% संयुक्त राज्य अमेरिका 7% एवं जापान 6% की कटौती पर सहमत हुए। इसे मॉट्रियला समझौता 1987 का विस्तार भी माना जा सकता है। इस सम्मेलन को विश्व पर्यावरण सम्मेलन या ग्रीन हाउस सम्मेलन के नाम से भी जाना जाता है।

- **तृतीय पृथ्वी सम्मेलन** का आयोजन 10 वर्ष बाद 26 अगस्त-4 सितम्बर 2002 में जोंहासबर्ग में आयोजित हुआ। इस सम्मेलन में पर्यावरण संबंधी 150 धाराओं पर विश्वस्तरीय सहमति तैयार करना था पर इस सम्मेलन का कोई परिणाम नहीं निकल सका। इस सम्मेलन में विश्व के विभिन्न देशों से लगभग 2000 प्रतिनिधियों ने भाग लिया।

ABDIEL SOLUTIONS ABSOL PATNA

अभ्यास-प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न :

(i) कोयला किस प्रकार का संसाधन है?

(a) अनवीकरणीय (b) नवीकरणीय

(c) जैव (d) अजैव

ii. सौर ऊर्जा निम्नलिखित में से कौन-सा संसाधन है:-

(a) मानवकृत (b) पुनः पूर्तियोग्य

(c) अजैव (d) अचक्रीय

iii. तट रेखा से कितने कि० मी० क्षेत्र सीमा अपवर्जक आर्थिक क्षेत्र कहलाते है?

(a) 100 N.M. (b) 200 N.M.

(c) 150 N.M. (d) 250 N.M.

iv. डाकूओं की अर्थव्यवस्था का संबंध है :-

(a) संसाधन संग्रहण से (b) संसाधनों के अनियोजित विदोहन से

(c) संसाधन के नियोजित दोहन से (d) इनमें से कोई नहीं ।

v. समुद्री क्षेत्र में राजनैतिक सीमा के कितनी कि० मी० क्षेत्र तक राष्ट्रीय सम्पदा निहित हैं :-

(a) 10.2 कि० मी० (b) 15.5 कि० मी०

(c) 12.2 कि० मी० (d) 19.2 कि० मी०

लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. संसाधन को परिभाषित कीजिए ।
2. संभावी एवं संचित-कोष संसाधन में अंतर स्पष्ट कीजिए ।
3. संसाधन संरक्षण की उपयोगिता को लिखिए ।
4. संसाधन-निर्माण में तकनीक की क्या भूमिका है, स्पष्ट कीजिए ।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न :

1. संसाधन के विकास में 'सतत् विकास' की अवधारणा की व्याख्या कीजिए ।
2. स्वामित्व के आधार पर संसाधन के विविध स्वरूपों का वर्णन कीजिए ।

परियोजना कार्य :

1. विद्यालय में विषय शिक्षक से मिलकर एक संगोष्ठी का आयोजन करें, जिसमें उपयोग में आनेवाले संसाधनों के संरक्षण के उपाय पर चर्चा हो ।
2. अपने प्रखंड में उपलब्ध संभाव्य संसाधन का सर्वेक्षण कर उसके विकास पर आधारित एक प्रतिवेदन प्रस्तुत कीजिए ।

ABDIEL SOLUTIONS ABSOL PATNA

(क) प्राकृतिक संसाधन

(क) भूमि संसाधन :

पूर्व अध्याय के अध्ययन से आप संसाधन की संकल्पना से अवगत हो चुके हैं । यहाँ यह भी स्पष्ट किया जा चुका है कि किसी भी देश की समृद्धि उपलब्ध संसाधनों के उचित उपयोग पर निर्भर है । संसाधन की संकल्पना मानवीय आवश्यकताओं को तृप्त करने वाले साधन एवं संतुष्ट करने वाले सेवाओं में यकीन करता है । इसमें तकनीकी ज्ञान एवं संस्थाओं का सहयोग अपरिहार्य है ।

हम भूमि पर निवास करते हैं । हमारा आर्थिक क्रिया कलाप इसी पर संपादित होता है। हम विभिन्न रूपों में इसका उपयोग करते हैं । अत: यह अत्यंत महत्त्वपूर्ण संसाधन है । यह प्रकृति प्रदत्त होने के कारण एक प्राकृतिक संसाधन है । कृषि, वानिकी, पशु-चारण, मत्स्यन, खनन, वन्य-जीवन, परिवहन-संचार, जैसे आर्थिक क्रियाएँ भूमि पर सम्पन्न होने के कारण यह एक मौलिक संसाधन है । इतने व्यापक रूप उपयोगी होने के बावजूद यह एक सीमित संसाधन है । अस्तु, यह आवश्यक है कि उपलब्ध भूमि का विविध उद्देश्यों की पूर्ति के लिए सावधानीपूर्वक एवं नियोजित रूप से उपयोग किया जाय ।

भूमि संसाधन के कई भौतिक स्वरूप हैं, जैसे-पर्वत, पठार, मैदान, निम्नभूमि और घाटियाँ इत्यादि । ये विविध स्वरूप जलवायु से भी प्रभावित होते हैं। भारत भूमि संसाधन में सम्पन्न है। यहाँ कुल उपलब्ध भूमि के लगभग 43 प्रतिशत भाग पर मैदान का विस्तार है, जो कृषि एवं उद्योगों के विकास के लिए उपयोगी है। 30 प्रतिशत भाग पर्वतीय क्षेत्र है, जो

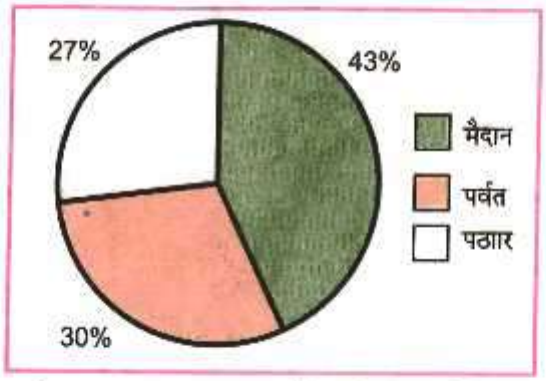

चित्र-1(क).1 : भारत में भूमि का भौतिक स्वरूप

बारहमासी नदियों के प्रवाह को सुनिश्चित करते हुए पर्यटन विकास के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ मुहैया कराती हैं । यह पारिस्थितिकी संतुलन के लिए भी महत्त्वपूर्ण है । देश का 27 प्रतिशत भूभाग पठार के रूप में विस्तृत हैं, जहाँ खनिज, जीवाश्म ईंधन एवं वन सम्पदा के कोष संचित हैं ।

मृदा निर्माण :

मृदा पारितंत्र का एक महत्त्वपूर्ण घटक है । असंगठित पदार्थों से निर्मित पृथ्वी की सबसे ऊपरी पतली परत मृदा कहलाती है । मिट्टी या मृदा सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण नवीकरणीय प्राकृतिक संसाधन है । यह न केवल पौधों के विकास का माध्यम है बल्कि, पृथ्वी पर विविध जीव-समुदायों का पोषण भी करती है । मृदा में निहित उर्वरता मानव के आर्थिक क्रिया-कलाप को प्रभावित करता है और देश की नियति का भी निर्धारण करता है । इसके नष्ट होने के साथ संपत्ति एवं संस्कृति दोनों ध्वस्त हो जाते हैं । अत: मृदा एक जीवंत-तंत्र है।

मृदा निर्माण एक लंबी अवधि में पूर्ण होने वाली जटिल प्रक्रिया है । कुछ सेंटीमीटर गहरी मृदा के निर्माण में लाखों वर्ष लग जाते हैं । चट्टानों के टूटने-फूटने तथा भौतिक, रासायनिक और जैविक परिवर्तनों से मृदा निर्माण होता है । भूगोलविद् इसे अत्यन्त धीमी प्रक्रिया मानते हैं ।

मृदा निर्माण के कारक

- उच्चावच या धराकृति
- मूल शैल या चट्टान
- जलवायु
- वनस्पति
- जैव पदार्थ
- खनिज कण
- समय

चित्र-1(क).2 : मृदा परिच्छेरिका

तापमान परिवर्तन, प्रवाहित जल की क्रिया, पवन, हिमनद और अपघटन की अन्य क्रियाएँ भी ऐसे तत्त्व हैं, जो मृदा निर्माण में सहयोग करती हैं। मृदा निर्माण में जैविक एवं रासायनिक परिवर्तन की भी अहम् भूमिका होती है । निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि मृदा निर्माण में जैव (ह्यूमस) और अजैव दोनों प्रकार के पदार्थ भाग लेते है। (चित्र 1(क).2)

मृदा निर्माण की प्रक्रिया के निर्धारक तत्त्व, उनके रंग-गठन, गहराई, आयु व रासायनिक और भौतिक गुणों के आधार पर भारत की मृदा को निम्नवत् बाँट कर अध्ययन किया जा सकता है ।

मृदा के प्रकार एवं वितरण :

भारत के उच्चावच, भू-आकृति, जलवायु एवं वनस्पतियों में पर्याप्त विविधता पायी जाती है । जिसकी वजह से यहाँ छ: (6) प्रमुख प्रकार की मृदाएँ विकसित हुई हैं । ये भूमि संसाधन की गुणवत्ता के आधार हैं । इनका वर्णन क्रमश: किया जा रहा है :

1. जलोढ़ मृदा :

यह मृदा भारत में विस्तृत रूप से फैली हुई सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण मृदा है । उत्तर भारत का मैदान पूर्णत: जलोढ़ निर्मित है, जो हिमालय की तीन महत्त्वपूर्ण नदी प्रणालियों सिंधु, गंगा और ब्रह्मपुत्र द्वारा लाए गए जलोढ़ के निक्षेप से बना है । राजस्थान एवं गुजरात में भी एक सँकरी पट्टी के रूप में इस मृदा का प्रसार है । पूर्वी तटीय मैदान स्थित महानदी, गोदावरी, कृष्णा और कावेरी नदियों द्वारा निर्मित डेल्टा का भी निर्माण जलोढ़ से ही जुड़ा है । कुल मिलाकर भारत में लगभग 6.4 करोड़ हेक्टेयर क्षेत्र पर जलोढ़ मृदा फैली हुई हैं ।

चित्र-1 (क).3 : जलोढ़ मृदा

जलोढ़ मिट्टी का गठन बालू, सिल्ट एवं मृत्तिका के विभिन्न अनुपात से होता हैं । इसका रंग धुँधला से लेकर लालिमा लिये भूरे रंग का होता है ।

इस मृदा के कण नदी मुहाने से घाटी में ऊपर और क्रमशः बड़े होते जाते हैं । ऐसी मृदाएँ पर्वत पदीय क्षेत्र में बने मैदानों जैसे-द्वार, 'चौर' एवं तराई में आमतौर पर मिलती हैं । इनके कणों पर घटकों के अलावा मृदा की पहचान इनके आयु से भी होती है । आयु के आधार पर जलोढ़ मृदा के दो प्रकार हैं:–पुराना एवं नवीन जलोढ़ । पुराने जलोढ़ में कंकड़ एवं बजरी की मात्रा अधिक होती है । इसे बांगर कहा जाता है । बांगर की तुलना में नवीन जलोढ़ में महीन कण पाये जाते हैं; खादर कहलाता है । 'खादर' में बालू एवं मृत्तिका का मिश्रण होता है । ये काफी उपजाऊ होते है ।

जलोढ़ मृदा में पोटाश, फास्फोरस और चूना जैसे तत्त्वों की प्रधानता होती है, जबकि इसमें नाइट्रोजन एवं जैव पदार्थों की कमी रहती है । यह मिट्टी गन्ना, चावल, गेहूँ, मक्का, दलहन जैसी फसलों के लिए उपयुक्त मानी जाती है । अधिक उपजाऊ होने के कारण इस मिट्टी पर गहन कृषि की जाती है। परिणामतः, यहाँ जनसंख्या घनत्व भी ऊँचा है ।

क्या आप जानते हैं?

उत्तर बिहार में बालू प्रधान जलोढ़ को दियारा भूमि कहते हैं। यह मक्का की कृषि के लिए विश्व प्रसिद्ध है।

2. काली मृदा :

इस मिट्टी का रंग काला होता है जो इसमें उपस्थित एल्युमीनियम एवं लौह यौगिक के कारण है । यह कपास की खेती के लिए सर्वाधिक उपयुक्त मानी जाती है । जिस कारण इसे 'काली कपासी मृदा' के नाम से भी जाना जाता है । भारत में यह मृदा लगभग 6.4 करोड़ हेक्टेयर भूमि पर फैली हुई है। जो खास तौर पर दक्कन के लावा प्रदेश

चित्र-1 (क).4 : काली मृदा

महाराष्ट्र, गुजरात, कर्नाटक, आंध्रप्रदेश तथा तमिलनाडु राज्यों में विस्तृत हैं । इस मिट्टी का निर्माण, मूल शैलों एवं ज्वालामुखी के बेसाल्ट लावा के विघटन से हुआ है । इस मृदा का स्थानीय नाम 'रेगुर' भी है ।

इस मिट्टी की सबसे बड़ी विशेषता है कि इसमें नमी धारण करने की क्षमता अत्यधिक होती है । यह मृदा कैल्शियम कार्बोनेट, मैग्नीशियम, पोटाश और चूना जैसे पौष्टिक तत्त्वों से परिपूर्ण होती है । किन्तु, फास्फोरस की कमी रहती है । शुष्क या गर्म मौसम में इसमें दरारें पड़ जाती हैं, जिससे अच्छी तरह से वायु का मिश्रण हो पाता है । किन्तु, गीली होने के साथ ही यह मृदा चिपचिपी हो जाती है, जिसे जोतना संभव नहीं हो पाता है । अतः मॉनसून के प्रथम बौछार में ही इसमें जुताई कर दिया जाता है। कम वर्षा के क्षेत्रों में भी अत्यधिक ऑक्सीकृत होने के कारण बिना सिंचाई के भी कपास की खेती के लिए यह मिट्टी उपयुक्त है। इसके अतिरिक्त इस मृदा में गन्ना, प्याज, गेहूँ एवं फलों की खेती अनुकूल मानी जाती है ।

3. लाल एवं पीली मृदा :

इस प्रकार की मृदा का विकास प्रायद्वीपीय पठार के पूर्वी एवं दक्षिणी हिस्से में रवेदार आग्नेय चट्टानों द्वारा सामान्यतः 100 से०मी० से कम वर्षा वाले क्षेत्रों में हुआ है। इस मृदा में लौहांश की मात्रा के कारण इसका रंग लाल होता है । जलयोजन के पश्चात् यह मृदा पीले रंग की हो जाती है । मूल रूप से यह ग्रेनाइट, नीस- जैसे रवेदार आग्नेय चट्टानों के विघटित एवं रूपांतरित होने से बने हैं । इसका विस्तार भारत के कुल कृषि भूमि के 7.2 करोड़ हेक्टयर भूमि पर पाया जाता है । लाल या पीली मृदा का प्रसार तमिलनाडु, कर्नाटक, गोवा, द० पू० महाराष्ट्र, आंध्रप्रदेश, उड़ीसा, छोटानागपुर पठार एवं मेघालय पठार के क्षेत्रों में है । जैव पदार्थों की कमी के कारण यह मृदा जलोढ़ एवं काली मृदा की अपेक्षा कम उपजाऊ होती है । उर्वरकों का उपयोग कर इसकी उत्पादकता को बढ़ाई जा सकती है । इस मृदा में सिंचाई की व्यवस्था कर चावल, ज्वार-बाजरा, मक्का, मूंगफली, तम्बाकू और फलों का उत्पादन किया जा सकता है ।

4. लैटेराइट मृदा :

लैटेराइट शब्द की उत्पत्ति ग्रीक भाषा के लैटर (LATER) शब्द से हुआ है, जिसका शाब्दिक अर्थ 'ईंट' होता है । इस प्रकार के मिट्टी की विकास उच्च तापमान एवं अत्यधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में हुआ है । भारत में इस मृदा का विस्तार 1.3 करोड़ हेक्टेयर से भी अधिक भू-भाग पर है। ऋतुवत् भारी वर्षा से ऊँचे सपाट अपरदित सतहों पर यह मृदा पायी जाती है । यह मृदा, तीव्र निक्षालन (Leaching) का परिणाम है । जिसमें ह्यूमस की मात्रा नगण्य होती है । अत्यधिक तापमान के कारण जैविक पदार्थों को अपघटित करने वाले बैक्टीरिया नष्ट हो जाते हैं । अपक्षय के कारण लैटेराट मिट्टी कठोर हो जाती है । एल्युमीनियम और लोहे के आक्साईड के कारण इसका रंग लाल होता है । इस प्रकार की मिट्टियों में रासायनिक खाद एवं अन्य उर्वरकों का प्रयोग कर उत्पादन किया जा सकता है । कर्नाटक, केरल, तमिलनाडू, म०प्र० और उड़ीसा तथा असम की पहाड़ियों में लैटेराइट मिट्टी का विस्तार मिलता है । कर्नाटक, केरल और तमिलनाडु जैसे राज्यों में मृदा संरक्षण तकनीक के सहारे चाय एवं कहवा का उत्पादन किया जाता है । तमिलनाडु, आंध्रप्रदेश और केरल में इस मृदा में काजू की खेती उपयुक्त मानी जाती है ।

चित्र-1 (क).5 : लैटेराइट मृदा

5. मरूस्थलीय मृदा :

चित्र-1(क).6 : मरूस्थलीय मृदा

इस प्रकार की मिट्टी लम्बी शुष्क ऋतु, अल्प वर्षा, हयूमस रहित बालुई मिट्टी वाले क्षेत्रों में विकसित होती है। इस मृदा में संस्तरों का विकास काफी कम पाया जाता है । रासायनिक अपक्षय अत्यंत सीमित होता है । इस मृदा का रंग लाल या हल्का भूरा होता है । इस प्रकार की मृदा प० राजस्थान, सौराष्ट्र, कच्छ, पश्चिमी हरियाणा और द०पंजाब में पायी जाती है । इसमें वनस्पति और उर्वरक खनिज का अभाव पाया जाता है, किन्तु, सिंचाई की व्यवस्था कर कपास, चावल, गेहूँ का भी उत्पादन किया जा सकता है ।

6. पर्वतीय मृदा :

इस प्रकार की मृदाएँ प्राय: पर्वतीय और पहाड़ी क्षेत्रों में देखने को मिलती हैं । जहाँ पर्याप्त वर्षा-वन पाये जाते हैं । यह मृदा जटिल एवं विविधता वाली होती हैं । यह नदी घाटियों में जलोढ़ मृदा एवं ऊँचे भागों में मोटे-कणों वाली अपरिपक्व मृदा के रूप में पायी जाती है । पर्वतीय भागों में प्राय: भू-आकृतिक, वानस्पतिक एवं **जलवायविक** दशाओं में पर्याप्त जटिलता एवं विविधता के कारण यहाँ एक ही प्रकार के मृदा के बड़े-बड़े क्षेत्र नहीं मिलते हैं हिमाच्छादित क्षेत्रों में इन मृदाओं का अपरदन हो जाता है और ये अम्लीय एवं हयूमस रहित हो जाते हैं । नदी घाटी के निम्नवर्ती क्षेत्रों में, विशेषकर नदी सोपनों और जलोढ़ पंखों में, ये मृदा उपजाऊ होती हैं। यहाँ ढलानों पर फलों के बगान एवं नदी-घाटी में चावल एवं आलू का लगभग सभी क्षेत्रों में उत्पादन किया जाता है ।

उपरोक्त सभी मृदा के वितरण को मानचित्र संख्या 1 (क).7 में भी देखा जा सकता है।

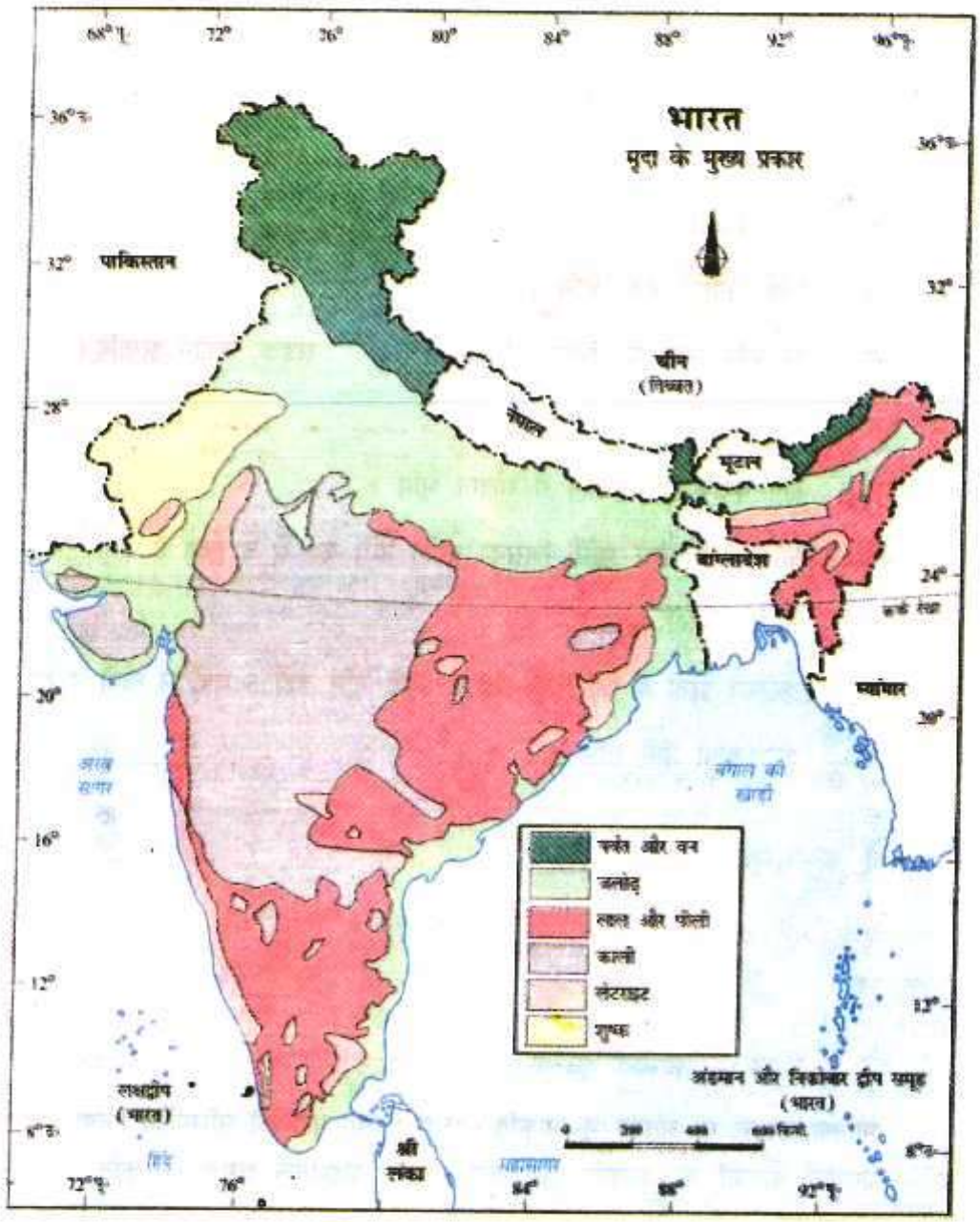

चित्र-1 (क).7 : भारत : मृदा के प्रकार का मानचित्र

भूमि उपयोग का बदलता स्वरूप

भूमि उपयोग : मानव विविध उद्देश्यों को ध्यान में रखकर भूमि-संसाधन का उपयोग करता है। ये उपयोग निम्न वर्ग में रखे जाते हैं–

(क) वन विसतार

(ख) कृषि अयोग्य बंजर भूमि ।

(ग) गैर-कृषि कार्य में संलग्न भूमि यथा इमारत, सड़क, उद्योग इत्यादि।

(घ) स्थायी चारागाह एवं गोचर भूमि ।

(ड़) बाग-बगीचे एवं उपवन में संलग्न भूमि ।

(च) कृषि योग्य बंजर भूमि, जिसका प्रयोग पाँच वर्ष से न हुआ है ।

(छ) वर्त्तमान परती भूमि ।

(ज) वर्त्तमान परती के अतिरिक्त वह वे परती भूमि जहाँ 5 वर्षों से खेती न हुई है।

(झ) शुद्ध बोयी गयी भूमि ।

भारत में भू-उपयोग का स्वरूप

भू-उपयोग को दो प्रमुख कारक निर्धारित करते हैं:–

(क) भौतिक कारक

(ख) मानवीय कारक

भौतिक कारकों के अंतर्गत भू-आकृति, जलवायु तथा मृदा को सम्मिलित किया जाता है। जबकि मानवीय कारकों के अन्तर्गत जनसंख्या घनत्व, प्रौद्योगिक-क्षमता, संस्कृति एवं परंपरा इत्यादि शामिल किया जाता है ।

भारत के कुल भौगोलिक क्षेत्र 32.8 लाख वर्ग कि० मी० के मात्र 93% भाग का ही भूमि-उपयोग का आँकड़ा उपलब्ध है । जम्मू-कश्मीर में पाक-अधिकृत तथा चीन अधिकृत भूमि का भू-उपयोग सर्वेक्षण नहीं हो पाया है ।

भारत के भूमि उपयोग को चित्र 1.8 में देखा जा सकता है । इस चित्र में वर्ष 1960-61 एवं 2002-03 का भूमि उपयोग दिखाया गया है ।

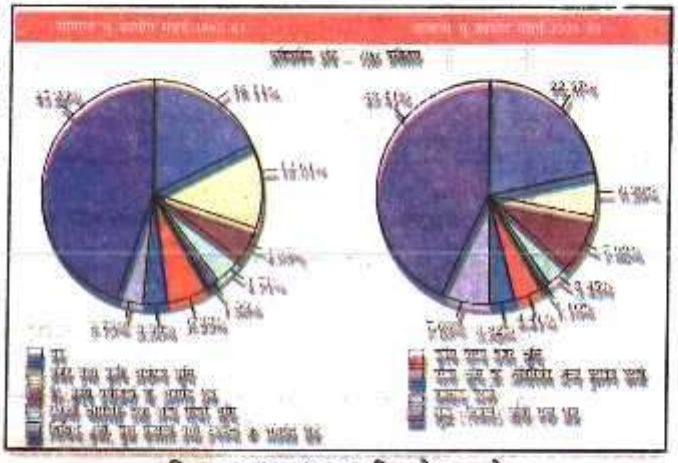

चित्र-1 (क).8 भूमि के उपयोग

भारत पशुधन के मामले में विश्व के अग्रणी देशों में शामिल किया जाता है । किन्तु, स्थायी चारागाह के लिए बहुत कम भूमि उपलब्ध है जो पशुधन के लिए पर्याप्त नहीं है । अतः पशुपालन पर इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है । वर्त्तमान में परती के अतिरिक्त अन्य परती भूमि अनुपजाऊ हैं । ऐसी भूमि में दो तीन वर्ष में अधिक से अधिक दो बार बोया जा सकता है । अगर ऐसी भूमि को भी शुद्ध बोया गया क्षेत्र में शामिल कर लिया जाय तब भी वर्त्तमान उपलब्ध क्षेत्रफल का मात्र 54% भूमि ही कृषि योग्य है ।

शुद्ध बोये गये क्षेत्र के विस्तार में भी सभी राज्यों में पर्याप्त विविधता है । पंजाब एवं हरियाणा में कुल भूमि के 80% भाग पर खेती होती है जबकि अरूणाचल प्रदेश, मिजोरम, मणिपुर एवं अंडमान निकोबार द्वीप समूह में 10% से भी कम क्षेत्र में खेती होती है ।

किसी भी देश में पर्यावरण संतुलित रखने के लिए उसके क्षेत्र के 33% भूभाग पर वन विस्तार वांछित है । इस निर्धारित सीमा को हासिल करने के लिए राष्ट्रीय वन नीति 1952 भी बनाया गया है। पर आज भी मात्र 20% भू-भाग पर वन का विस्तार किया जा सका है, जो पर्यावरणीय विनाश की ओर संकेत कर रहा है । वन पर्यावरण संतुलन के साथ-साथ लोगों की आजीविका के स्रोत भी हैं । बंजर भूमि एवं गैर-कृषि प्रयोजन कार्य में संलग्न भूमि लगातार समस्या

को बढ़ाने में मदद कर रहे हैं । पथरीली चट्टानें, शुष्क एवं मरूस्थलीय भूमि बंजर हैं तो इस भूमि पर संस्कृति का गैर नियोजित विकास भूमि संरक्षण एवं प्रबंधन के मानकों की अवहेलना कर रहा है । मानव अधिवास का निर्माण, संचार-साधन (रेल सड़क) का विकास, उद्योग धंधे की स्थापना, उत्सर्जित पदार्थों का निवटान भू-संसाधन के निम्नीकरण में अप्रत्याशित सहयोग करता है एवं इन कारणों से समाज एवं पर्यावरण दोनों पर आपदा की काली छाया पड़ने लगी है ।

भू-क्षरण और भू-संरक्षण :

मृदा को अपने स्थान से विविध क्रियाओं द्वारा स्थानांतरित होना भू-क्षरण कहलाता है । यह विविध प्राकृतिक कारकों जैसे-गतिशील-जल, पवन, हिमानी और सामुद्रिक लहरों द्वारा एक प्रकार की मृदा चोरी है । गुरूत्व बल के प्रभाव से भी पहाड़ी ढ़लानों पर मृदा नीचे की ओर स्खलित होती हैं । पर्यावरणीय समस्या से जलवायु परिवर्त्तन, भू-तापन जैसी भयावह स्थितियाँ पैदा हुई हैं। जिसकी वजह से अनावृष्टि या अतिवृष्टि पैदा होती हैं । अनावृष्टि से मृदा की नमी एवं सांस्तरिक संगठन का लोप हो जाता है और धीरे-धीरे मृदा शुष्क होकर प्रकृति के अपरदनकारी दूतों द्वारा भू-क्षरित कर लिये जाते है । तीव्र वर्षा से भी मृदा का कटाव होकर अवनालिका के माध्यम से किसी खड्ड या घाटी में जमा कर दिये जाते हैं । भारत में इस प्रकार से लगभग 13 करोड़ हेक्टेयर भूमि का नुकसान हुआ है और ये निम्नीकृत हो गये हैं । इस निम्नीकृत भूमि का 28% क्षेत्र वन के अन्तर्गत तथा 56% क्षेत्र जल-अन्तर्गत हैं ।

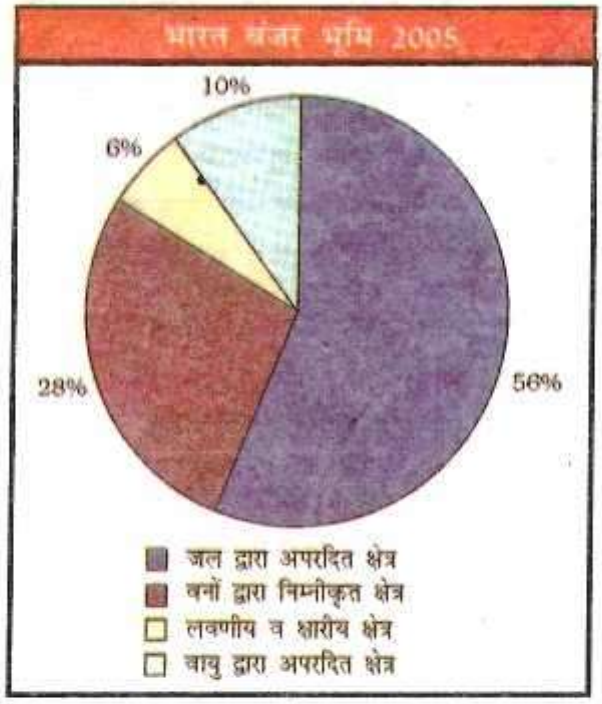

चित्र-1 (क).9 : भारत बंजर भूमि 2005

शेष क्षेत्र या तो लवणीय और क्षारीय स्थिति में है या मानव क्रिया-कलाप से निम्नीकृत हो गये हैं । वनोन्मूलन, अति-पशुचारण, खनन, रसायनों का अत्यधिक उपयोग-जैसी मानवीय अनुक्रिया भूमि निम्नीकरण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

खनन् के उपरांत उस स्थान को खाइयों एवं मलवों के साथ खुला छोड़ दिया जाता है । इसके कारण झारखंड, छत्तीसगढ़, म०-प्र० जैसे राज्यों में भूमि निम्नीकरण हुआ है । उड़ीसा वनोन्मूलन के कारण भूमि-निम्नीकरण का शिकार हुआ है। इसी प्रकार गुजरात, राजस्थान, मध्य प्रदेश और महाराष्ट्र जैसे राज्यों में अति पशुचारण ने भूमि के स्तर को कुप्रभावित किया है । पंजाब, हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश में अधिक सिंचाई से भी भूमि का निम्नीकरण हुआ है । अति सिंचन से जलाक्रांतता (water Logging) की समस्या पैदा होती है जिससे मृदा में लवणीय और क्षारीय गुण बढ़ जाती है जो भूमि के निम्नीकरण के लिए उत्तरदायी होते हैं । खनिज आधारित उद्योगों में (सीमेंट, मृदाबर्त्तन, मूर्ति-निर्माण) में चूना पत्थर, खड़िया, सेलखड़ी के पीसने से वायुमंडल में धूल विसर्जित होती है जो धीर-धीरे भूमि पर परत के रूप में जम जाते हैं और मृदा के जल अवशोषण की क्षमता को कुप्रभावित करते हैं । उद्योगों से निकलने वाले अपशिष्ट पदार्थ भूमि और जल दोनों को ही प्रदूषित करते हैं ।

यह अकाट्य सत्य है कि मानव के 95% से भी अधिक आवश्यकताओं की पूर्ति भूमि द्वारा होती है । जीवन की उत्पत्ति एवं विकास के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ मृदा में सुलभ होते हैं । यही हमारे पूर्वजों ने भी इस भूमि का उपयोग इस संदर्भ में किये और उनकी संतति के रूप में वर्त्तमान पीढ़ी भी लाभान्वित हो रही है । इतना ही नहीं, भावी पीढ़ी के लिए भी यह आधार स्तंभ बनी रहेगी । भोजन, वस्त्र, आवास जैसी अनिवार्य आवश्यकताओं की आपूर्ति के अतिरिक्त मानव ने जो अपनी लिप्सा बढ़ायी है उससे भूमि का निम्नीकरण होता रहा है । साथ ही साथ इसे बढ़ावा देने वाले प्राकृतिक ताकतों को बढ़ावा मिल रहा है ।

अतः भूमि निम्नीकरण आधुनिक मानव सभ्यता के लिए एक विकट समस्या है, इसका संरक्षण हमारे लिए चुनौती है । किन्तु, सृष्टि को अक्षुण्ण रखना है तो चुनौती स्वीकार करते हुए संरक्षण पर ध्यान देना अवश्यक है । संरक्षण के विविध तरीके हो सकते हैं जो मानवीय क्रिया-कलाप द्वारा अनुप्रयोग में लाए जा सकते हैं । फसल-चक्रण द्वारा मृदा के पोषणीय स्तर को बरकरार रखा जा सकता है । गेहूँ, कपास, मक्का, आलू आदि के लगातार उगाने से मृदा में ह्रास

उत्पन्न होता है । इसे तिलहन-दलहन पौधे की खेती के द्वारा पुनर्प्राप्त किया जा सकता है । इससे नाइट्रोजन का स्थिरीकरण होता है । पहाड़ी क्षेत्रों में समोच्च जुताई (Contour Ploughing) द्वारा मृदा अपरदन को रोका जा-सकता है। मृदा की सतत् गुणवत्ता बनी रहे इसके लिए वर्षा जल का संचयन, भूपृष्ठीय जल का संरक्षण, भूमिगत जल की पुनर्पूर्ति का प्रबंधन आवश्यक है। आधुनिक सिंचाई पद्धतियों को अपनाकर मृदा एवं जल दोनों को संरक्षित किया जा सकता है। पवन अपरदन वाले क्षेत्रों में पट्टिका कृषि (Strip farming) श्रेयस्कर है, जो फसलों के बीच घास की पट्टियाँ विकसित करने पर आधारित है । रसायन का उचित उपयोग कर मृदा का संरक्षण किया जा सकता है । रसायनों के सतत् उपयोग से मृदा के पोषक तत्त्वों में कमी होने लगती है। ये पोषक तत्व जल, वायु, केंचुआ एवं अन्य सूक्ष्म जीव हो सकते है । एंडिन नाम का रसायन मेढ़क के प्रजनन पर रोक लगा देता है । फलतः कीटों की संख्या को बढ़ा देता है। अतः रसायनों की जगह प्राकृतिक खाद का प्रयोग किया जाय । रासायनिक उर्वरक की जगह जैविक खाद, का उपयोग मृदा के सरंक्षण में सहायक है । संभव हो तो जैव-कीटनाशी का प्रयोग किया जाय जिससे फसल की सुरक्षा के साथ -साथ संख्या सीमित हो जाती है।

वृक्षारोपण मृदा संरक्षण की सबसे बड़ी शर्त्त है; जिससे मृदा संरक्षण को बाधा पहुँचती है और इनके पत्तियों से प्राप्त ह्यूमस मृदा की गुणवत्ता को बढ़ाने में सहायक होती है । उपरोक्त प्रक्रम या उपक्रम द्वारा मृदा संरक्षण का कार्य किया जा सकता है ।

अभ्यास प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न :–

1. पंजाब में भूमि निम्नीकरण का मुख्य कारण है :

(a) वनोन्मूलन (b) गहन खेती

(c) अति-पशुचारण (d) अधिक सिंचाई

2. सोपानी कृषि किस राज्य में प्रचलित है ?

(a) हरियाणा (b) पंजाब

(c) बिहार का मैदानी क्षेत्र (d) उत्तराखंड

3. मरूस्थलीय मृदा का विस्तार निम्न में से कहाँ है ?

(a) उत्तर प्रदेश (b) राजस्थान

(c) कर्नाटक (d) महाराष्ट्र

4. मेढ़क के प्रजनन को नष्ट करने वाला रसायन कौन है ?

(a) बेंजीन (b) यूरिया

(c) एंड्रिन (d) फॉस्फोरस

5. काली मृदा का दूसरा नाम क्या है ?

(a) बलुई मृदा (b) रेगुर मृदा

(c) लाल मृदा (d) पर्वतीय मृदा

लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. जलोढ़ मृदा के विस्तार वाले राज्यों के नाम बतावें। इस मृदा में कौन-कौन सी फसलें लगायी जा सकती हैं ?

2. समोच्च कृषि से आप क्या समझते हैं ?

3. पवन अपरदन वाले क्षेत्र में कृषि की कौन-सी पद्धति उपयोगी मानी जाती है ?

4. भारत के किन भागों में नदी डेल्टा का विकास हुआ है? यहाँ की मृदा की क्या विशेषता है।

5. फसल चक्रण मृदा संरक्षण में किस पर सहायक है ?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न :

1. जलाक्रांतता कैसे उपस्थित होता है ? मृदा अपरदन में इसकी क्या भूमिका है ?

2. मृदा संरक्षण पर एक निबंध लिखिए ।

3. भारत में अत्यधिक पशुधन होने के बावजूद भारतीय अर्थव्यवस्था में इसका योगदान लगभग नगण्य है। स्पष्ट करें।

परियोजना कार्य :

1. अपने आस-पास के क्षेत्र में उपलब्ध मृदा संसाधन के उपयोग एवं सरंक्षण हेतु एक परियोजना तैयार करें।

2. ग्राम प्रतिनिधि, विद्यालय प्रधान से मिलकर संसाधन संरक्षण एवं प्रबंधन पर एक संगोष्ठी का आयोजन करें ।

(ख) जल संसाधन

आपने, वर्ष 2008 में उत्तर बिहार के कोशी प्रदेश में आये बाढ़ को देखा होगा या इसके विषय में सुना होगा टी०वी०, समाचार-पत्र या आकशवाणी पर देखा या सुना होगा कि उस बाढ़ की विभीषिका अत्यंत प्रलयंकारी थी, जिसमें अपार जान-माल की क्षति हुई थी।

यह जानकर आपको घोर आश्चर्य होगा कि ये जल जहाँ एक ओर प्रलय का तांडव करते हैं तो दूसरी ओर मानवीय आवश्यकताओं को सरल और सुगम बनाकर सभ्यता भी रचते हैं। यही वजह है कि विश्व की लगभग सभी सभ्यताओं का विकास नदी घाटी में ही हुआ है। आधुनिक औद्योगिक युग में भी जल कहीं विद्युत पैदा करने में प्रयुक्त हो रहे हैं, तो कहीं औद्योगिक मशीनों को ठंढ़ा करने में।

जैसा कि आपको पता है कि पृथ्वी की सतह का तीन-चौथाई भाग जल से ढँका है। लेकिन अधिकांश जल लवणीय है। स्वच्छ जल सतही अपवाह और भूमिगत जल स्रोतों से प्राप्त होते हैं। इन स्रोतों का सतत् नवीकरण और पुनर्भरण जलीय चक्र द्वारा होता रहता है। जल चक्र गतिशील होते हैं जिस कारण जल का नवीकरण निर्बाध्य गति से होता है। यही कारण है कि यह एक नीवकरणीय संसाधन भी है। फिर भी, विश्व के अनेक देश या क्षेत्र जल के प्यासे हैं।

जल के स्रोत :

पृथ्वी के अधिकतर स्तर पर जल की उपस्थिति के कारण ही पृथ्वी को नीला ग्रह (Blue Planet) की संज्ञा दी गयी है। यह जीवों की उत्पत्ति का एक महत्त्वपूर्ण कारक है। यहाँ जल-स्रोत विविध रूपों में पाये जाते हैं। 1. भू-पृष्ठीय जल 2. भूमिगत जल, तथा 3. वायुमंडलीय जल 4. महासागरीय जल।

जल भंडार को ध्यान में रखा जाय तो महासागर सबसे बड़े जल-संग्रहण केन्द्र होते हैं। इसी कारण इसे 'जलधि' की संज्ञा दी जाती है। हमारे

क्या आप जानते हैं?
विश्व के कुल जल-आयतन का 96.5 प्रतिशत जल महासागरों में ही पाया जाता है। उनमें मात्र 2.5 प्रतिशत ही अलवणीय (मृदु) जल है।

PATNA

जीवन में भू-पृष्ठीय और भूमिगत जल का ही प्रत्यक्षत: उपयोग होता है। अत: इन दोनों स्रोतों का वर्णन किया जा रहा है।

1. भू-पृष्ठीय जल : धरातल पर भू-पृष्ठीय जल का मूल स्रोत वर्षण है। वर्षण का लगभग 20 प्रतिशत भाग वाष्पित होकर वायुमंडल में चला जाता है। कुछ अंश भूमिगत हो जाते हैं। जबकि अधिकांश भाग नदी-नालों, झील-तालाबों तथा ताल-तलैया में मिल जाते हैं। शेष जल सागर एवं महासागरों में जा मिलता है। उपरोक्त, ये सभी भू-पृष्ठ पर पाये जाने वाले जल भू-पृष्ठीय या धरातलीय जल कहलाते हैं।

2. भूमिगत जल : वर्षा जल के धरातलीय छिद्रों से रिस-रिस कर कठोर शैलीय आवरण पर जमा जल भूमिगत जल कहलाता है। इस जल के भंडारण में भू-पृष्ठीय जल का भी योगदान होता है। अर्थात्, दोनों माध्यम से जल रिसकर बड़े-मात्रा में भूगर्भ में एकत्रित हो जाती हैं। इस प्रक्रिया से एकत्रित जल भौम जल के नाम से भी जाना जाता है।

जल संसाधन का वितरण :

विश्व स्तर पर जल के वितरण को देखा जाय तो पता चलता है कि अधिकांश जल दक्षिणी गोलार्द्ध में ही है। इसी कारण दक्षिणी गोलार्द्ध को 'जल गोलार्द्ध' और उत्तरी गोलार्द्ध को 'स्थल गोलार्द्ध' के नाम से जाना जाता है। पृथ्वी पर उपलब्ध जल के अधिकांश भाग लवण की उच्च सांद्रता धारण करते हैं। फिर भी जैव विविधताएँ हेतु ये महत्वपूर्ण हैं। जहाँ, मछलियाँ समुद्री-जीव-जन्तु, वनस्पतियों एवं खनिजों का भण्डार पाया जाता है।

क्या आप जानते हैं?
विश्व के कुल मृदु जल का लगभग 75 प्रतिशत अंटार्कटिका, ग्रीनलैंड एवं पर्वतीय क्षेत्रों में बर्फ की चादर या हिमनद के रूप में पाया जाता है। और लगभग 25% भूमिगत जल स्वच्छ जल के रूप में उपलब्ध है।

भारत में जल संसाधन का वितरण अपर्याप्त है। क्योंकि, भारत में विश्व की लगभग 16% आबादी निवास करती है और इस अबादी के लिए विश्व का लगभग 4% स्वच्छ जल ही उपलब्ध है। भारत में प्रतिवर्ष 4000 घन कि०मी० जल वर्षण से तथा 1869 घन कि०मी० जल भूपृष्ठीय जल से प्राप्त होते हैं। कुल भू-पृष्ठीय जल का लगभग 2/3 भाग देश की तीन बड़ी नदियों; सिंधु, गंगा और ब्रह्मपुत्र में प्रवाहित है। आज भारत में जल भंडारण हेतु जलाशयों का निर्माण द्रुत गति से हो रहा है। जिसकी जल भंडारण की क्षमता लगभग 174 अरब घनमीटर हो गई है, जो देश की

स्वतंत्रता के समय मात्र 18 अरब घन मीटर थी। भारत की स्थलाकृति स्वरूप एवं अन्य बाधाओं की वजह से केवल 690 अरब घन मीटर जल का ही उपयोग कर पता है, जो कुल भारत के जल का 32% है। भारत में गंगा द्रोणी में उपयोग के योग्य जल भंडारण की क्षमता सर्वाधिक है। ब्रह्मपुत्र नदी का सर्वाधिक वार्षिक प्रवाह होते हुए उपयोग योग्य जल भंडारण की क्षमता–अति न्यून है। अगर उपयोग योग्य जल भंडारण की क्षमता को अनुपातिक दृष्टि से देखा जाय तो ताप्ती नदी का स्थान प्रथम है। इसमें जल भंडारण करने की क्षमता 97 प्रतिशत है। कुछ महत्वपूर्ण नदियों का ब्यौरा निम्न सारणी सं० 3.1 से प्रदर्शित किया जा रहा है।

क्या आप जानते हैं?

ब्रह्मपुत्र एवं गंगा विश्व की 10 बड़ी नदियों में से हैं। इन नदियों को विश्व की बड़ी नदियों में क्रमशः आठवाँ एवं दसवाँ स्थान प्राप्त है।

सारणी 3.1 भारत नदियों की द्रोणियों के अनुसार पृष्ठीय और भूमिगत जल का वितरण

(इकाई अरब घन मीटर में)

नदी द्रोणी	पृष्ठीय जल प्रवाह		भूमिगत जल	
	वार्षिक प्रवाह	उपयोग	आपूर्णीय	उपयोग
1. सिंधु	713	46.0	26.5	24.3
2. गंगा	5250	250.0	171.0	157.0
3. ब्रह्मपुत्र	629.0	24.0	27.0	24.0
4. गोदावरी	1105	76.3	40.7	37.0
5. कृष्णा	70.0	58.0	26.4	24.0
6. कावेरी	21.4	19	12.3	11.3
7. महानदी	68.9	50.0	16.5	15.0
8. नर्मदा	45.7	34.5	10.8	9.9
9. ताप्ती	14.9	14.5	8.3	7.6
अन्य नदियाँ	365.4	118.2	74.0	68.2
योग	1952.1	690.3	431.32	395.6

देश में भूमिगत जल का वितरण असमान है। इस पर चट्टानों की संरचना, धरातलीय दशा, जलापूर्ति के स्रोत जैसी तत्त्वों का प्रभाव पड़ता है। समतल मैदानी भागों में स्थित जलज चट्टानी भागों में भूमिगत जल की अपार राशि मौजूद है। जहाँ भेद्य या प्रवेश्य चट्टान पाये जाते हैं। भारत के उत्तरी मैदान में पंजाब से लेकर ब्रह्मपुत्र घाटी तक, जो हिमालयी नदियों के कारण मिट्टी से निर्मित हुआ है; में सर्वाधिक भूमिगत जल पाये जाते हैं। यहाँ देश का 42% जल पाया जाता है। एक अनुमान के अनुसार भारत में लगभग 443.9 अरब घन मीटर भूमिगत जल उपलब्ध है। जिसका 19% जल अकेले उत्तर प्रदेश में पाया जाता है। महाराष्ट्र, म०प्र० तथा तमिलनाडु जैसे बड़े राज्यों में भी भूमिगत जल संसाधन की संभाव्यता अधिक है।

जल संसाधन का उपयोग :

भारत की आबादी तीव्रतम गति से बढ़ रही है। स्वतंत्रता के पश्चात् भारत की जनसंख्या लगभग तिगुनी हो गई है। आबादी वृद्धि के साथ जल की सभी क्षेत्रों में माँग त्वरित गति से बढ़ी है। पेयजल, सिंचाई तथा उद्योग जैसे उपक्रमों की वृद्धि से जल की मांग काफी बढ़ गयी है। 1951 ई० में भारत में प्रति व्यक्ति जल की उपलब्धता 5177 घन मीटर थी, जो 2001 में 1829 घन मीटर प्रति व्यक्ति तक पहुँच गई है। संभावना है 2025 ई० तक पहुँचते-पहुँचते प्रति व्यक्ति जल की उपलब्धता 1342 घन मीटर प्रति व्यक्ति हो जाएगी। जो जल संकट की समस्या के आगमन का संकेत प्रतीत होता है। जहाँ ऐसे संकटापन्न देशों को जल का आयात करना पड़ेगा।

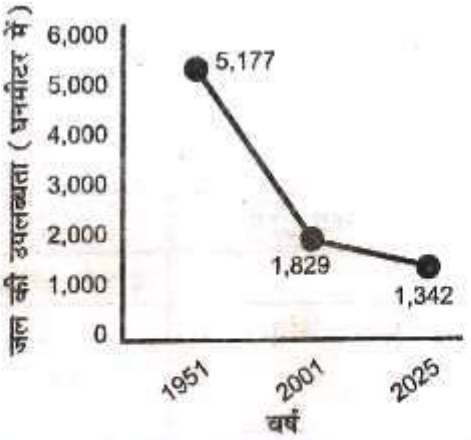

चित्र-3.1 वार्षिक जल की घटती उपलब्धता

जल का मानवीय जीवन में काफी उपयोग है। यहाँ तक कि जीवन-सृजन में भी जल महत्त्वपूर्ण है। प्राणी एवं वनस्पति में भी अधिकांश भाग जल के ही होते हैं। इससे जल के महत्व को सहज ढंग से

क्या आप जानते हैं?
प्राणियों में 65% तथा पौधों में 65-99% जल का अंश विद्यमान रहता है।

आँका जा सकता है। जल के उपयोग की सूची लंबी है। पेयजल, घरेलू कार्य, सिंचाई, उद्योग जन-स्वास्थ्य, स्वच्छता तथा मल-मूत्र विसर्जन इत्यादि कार्यों के लिए जल अपरिहार्य है। जल-विद्युत निर्माण तथा परमाणु-संयत्र-शीतलन, मत्स्य पालन, जल-कृषि, वानिकी, जल-क्रीड़ा जैसे कार्य की कल्पना बिना जल के नहीं की जा सकती है। भारत में जल उपयोग के बदलते स्वरूप को निम्न सारणी से देखा जा सकता है।

सारणी 3.2 भारत : जल के उपयोग का बदलता स्वरूप

(इकाई : अरब घन मीटर)

उपयोग	1990	2000	2010	2025	2050
घरेलू	25	33	42	52	60
सिंचाई	460	356	653	770	800
उद्योग	15	30	79	120	130
ऊर्जा	19	27	44	71	120
अन्य	30	33	35	37	40
योग	549	659	853	1050	1150

* अनुमानित (Estimated)

बहुउद्देशीय परियोजनाएँ :

प्राचीन ग्रंथों एवं अन्य ऐतिहासिक अभिलेखों से यह स्पष्ट होता है कि ईंट-पत्थरों, मिट्टी, मलबों के सहारे झीलों या अन्य जलाशयों के तटबंध और लहरों जैसी उत्कृष्ट कृतियाँ बनाई जाती थीं। अतः यह परिपाटी नवीन नहीं है, हमने आज कई नदियों पर बांध बनाये हैं।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद देश को आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाने तथा देशवासियों के जीवन स्तर को सुधारने हेतु योजनाएँ निर्मित हुईं, जिसमें नदी-घाटी

क्या आप जानते हैं ?

देश को विकास के रास्ते पर ले जाने वाले उक्त परियोजनाओं को प्रथम प्रधानमंत्री पं० जवाहरलाल नहेरू ने गर्व से 'आधुनिक भारत का मंदिर' कहा है।

परियोजनाओं पर विशेष बल दिया गया। इन परियोजना के विकास के कई उद्देश्य हैं– बाढ़-नियंत्रण, मृदा-अपरदन पर रोक, पेय एवं सिंचाई हेतु जलापूर्ति, विद्युत उत्पादन, उद्योगों के जलापूर्ति, परिवहन, मनोरंजन, वन्य-जीव संरक्षण, मत्स्य-पालन, जल-कृषि, पर्यटन इत्यादि। इन अनेक उद्देश्यों की पूर्ति हेतु सक्षम इन नदी घाटी परियोजनाओं को बहुद्देशीय परियोजना के नाम से विभूषित किया जाता है।

चित्र-3.2 हिराकुंड बांध

प्रथम प्रधानमंत्री का दृष्टिकोण था कि नदी-घाटी परियोजाएँ कृषि, औद्योगिकरण, ग्रामीण अर्थव्यवस्था, औद्योगिकरण तथा नगरीय व्यवस्था को समन्वित रूप से विकसित कर सकेगी। भारत में अनेक नदी-घाटी परियोजनाओं का विकास हुआ है। भाखड़ा-नांगल, हीराकुंड, दामोदर, गोदावरी, कृष्णा, स्वर्णरेखा एवं सोन परियोजना जैसी अनेक परियोजनाएँ भारत के बहुआयामी विकास में सहायक हो रहे हैं। गत कुछ वर्षों से बहुद्देशीय परियोजनाएँ एवं बाँध विरोध एवं पुनर्निरीक्षण का कारण बनते रहे हैं। नदियों में बाँध लगाने से नदियों का प्राकृतिक प्रवाह अवरूद्ध होता है; जिससे तल पर अवसादीकरण तेज हो जाता है। इसी तलछट जमाव से जलीय जीवों के साथ भोजन एवं प्रजनन तथा स्वच्छन्द विचरण की समस्या तो आती ही है; साथ ही बाढ़ जैसी विभीषिका भी उत्पन्न हो जाती है। इतना ही नहीं, बाढ़ग्रस्त मैदान की वनस्पतियाँ एवं मृदाएँ प्लावित होकर अपघटित भी हो जाती है।

'नर्मदा बचाओ आन्दोलन,' टिहरी बांध आन्दोलन जैसी अनेक जनविरोध बहुद्देशीय परियोजनाओं की खामियों को उजागर करते हैं। आमतौर पर लोग अपनी जमीन, आजीविका और संसाधन से लगाव एवं नियंत्रण को त्यागकर अन्यत्र विस्थापित

क्या आप जानते हैं?

'नर्मदा बचाओ आंदोलन' एक गैर सरकारी संगठन (N.G.O.) है; जो स्थानीय लोगों, किसानों, पर्यावरणविदों, मानवधिकार कार्यकर्त्ताओं को गुजरात के नर्मदा नदी पर सरदार सरोवर बांध के विरोध के लिए प्रेरित करता है।

ABSOLUTE SOLUTIONS PATNA

हो जाते हैं। जिसके बदले इन्हें न तो पर्याप्त मुआवजा मिल पाता है, और न ही ये विस्थापित होने के पश्चात इस परियोजना का ही लाभ ले पाते हैं। इसका लाभ पूँजीपति एवं जमींदार वर्ग को अवश्य मिल जाता है। यह सच है कि सिंचाई की सुलभता ने कई क्षेत्रों में फसल के प्रतिरूप को परिवर्तित किया है। जहाँ जल कृषि एवं वाणिज्य फसलों की ओर किसान आकृष्ट हुए हैं, वहीं, मृदाओं की लवणीकरण जैसी गंभीर समस्याएँ भी उत्पन्न हो रही हैं। इसी वजह से गरीब, भूमिहीन एवं अमीर भू-स्वामी के मध्य एक सामाजिक खाई का निर्माण होता प्रतीत हो रहा है। इस तरह के झगड़े अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी लगते एवं लाभ के बंटवारे में दिन-प्रतिदिन समस्याऐं उत्पन्न हो रहे हैं।

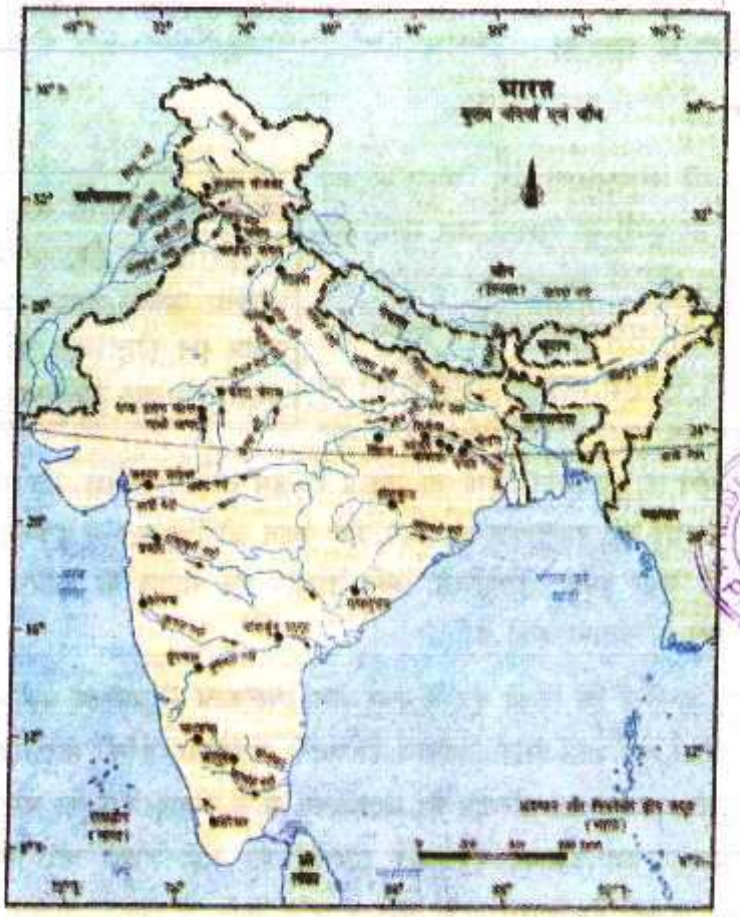

चित्र-1 (ख) प्रमुख नदियाँ एवं परियोजनाएँ

ABSOLUTE SOLUTIONS PATNA

अक्सर यह देखा जाता है कि नदी घाटी परियोजनाओं द्वारा वांछित उद्देश्यों की पूर्त्ति न करने की वजह से विरोध एवं आपत्तियां उठाई जाती हैं। इन बांधों का निर्माण बाढ़ नियत्रंण के लिए होता है। उनके जलाशयों में तलछट जमा होने से बाढ़ की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। अति वर्षा के जल भी बांध के नियंत्रण से बाहर हो जाते हैं। वर्ष 2007 में उत्तर बिहार की बाढ़-विभीषिका का मंजर आप देख या सुन चुके हैं। जो नेपाल स्थित बैराज के द्वारा छोड़े गए जल से अति विकट हो गई थी। जिससे जान-माल की क्षति के साथ-साथ भूमि निम्नीकरण की समस्या में इजाफा हुआ है। ऐसा भी माना जाता है कि बहुउद्देशीय परियोजनाओं के कारण भूकंपन की संभावना बढ़ जाती है। इतना ही नहीं, बाढ़ से जल-प्रदूषण, जल-जनित बीमारियाँ तथा फसलों में कीटाणु जनित बीमारियों का भी संक्रमण हो जाता है।

जल संकट :

जल की अनुपलब्धता जल- संकट के रूप में जाना जाता है। पृथ्वी पर विशाल जल सागर होने एवं नवीकरणीय होने के बावजूद जल दुलर्भता एक जटिल समस्या है। जल-संकट के भाव उत्पन्न होते ही मानस पटल पर सूखा ग्रस्त या अनावृष्टि क्षेत्र का चित्र उपस्थित होने लगता है। चित्र सं०-3.4 से जल संकट की स्थिति का आकलन किया जा सकता है। हम वर्षा में वार्षिक और मौसमी परिवर्तन के कारण जल संसाधन की उपलब्धता के समय और स्थान की विभिन्नता से इनकार नहीं कर सकते। प्राय: जल की कमी इसके अतिशोषण, अति उपयोग एवं समाज के विविध वर्गों में जल की असमान वितरण से उत्पन्न होती है।

क्या आप जानते हैं?

स्वीडेन के एक विशेषज्ञ फॉल्कन मार्क के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को प्रति दिन एक हजार घन मीटर जल की आवश्यकता है। इससे कम जल उपलब्धता जल संकट है।

आप जानते हैं कि किसी क्षेत्र में प्रचुर जल उपलब्धता के बावजूद वहाँ जल दुलर्भता व्याप्त हो जाती है। हमारे कई शहर इसके उदाहरण हैं। बढ़ती जनसंख्या, उनकी मांग तथा जल के असमान वितरण भी जल दुलर्भता का परिणाम है। जलाधिक्य से न केवल जल का घरेलू उपयोग बढ़ता है बल्कि, अधिक अनाज उत्पादन हेतु जल संसाधन का अति-शोषण कर सिंचित भूमि में भी अभिवृद्धि की जा रही है। जिससे शुष्क ऋतु में कृषि किया जा सके। अक्सर, देखा जाता है कि

किसान खेतों पर अपने निजी कुँए और नलकूप के द्वारा भूमि सिंचित कर कृषि उत्पादन को बढ़ा रहे हैं। परन्तु जरा आप सोचिए इसका परिणाम क्या होगा? इससे भूमिगत जलस्तर नीचे गिर सकता है और जल की उपलब्धता में कमी आ जायेगी और जैव समुदाय में पेयजल के अभाव के साथ भोजन सुरक्षा भी खतरे में पड़ जाएगा।

क्या आप जानते हैं?
वर्तमान समय में भारत में कुल विद्युत का लगभग 22 प्रतिशत भाग जल-विद्युत से प्राप्त होता है।

स्वतंत्रता के पश्चात भारत में तीव्र गति से औद्योगीकरण एवं नगरीकरण का विकास हुआ है। आज बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने भी अपने पैर जमा लिये हैं। उद्योगों की वजह से मृदु जल पर दबाव बढ़ रहा है। इन उद्योगों को संचालित करने के लिए ऊर्जा की आवश्यकता होती है, जिसकी अधिकांशत: पूर्ति जल विद्युत द्वारा होती है। शहरों में बढ़ती आबादी एवं शहरी जीवन शैली के कारण जल एवं विद्युत की आवश्यकता में त्वरित वृद्धि हुई है। जहाँ, नलकूप लगाकर जलापूर्ति के लिए अंधाधुंध शोषण हो रहा है और जल के भंडार तीव्र गति से घट रहे हैं।

क्या आप जानते हैं?
केवल कानपुर में 180 चमड़े के कारखाने हैं जो प्रतिदिन 58 लाख लीटर मल-जल गंगा में विसर्जित करती है।

अभी तक हमने जल संकट के मात्रात्मक पहलू पर चर्चा किया है। परन्तु, हमारे देश में कुछ ऐसी भी परिस्थितियाँ हैं; जहाँ जल की पर्याप्त मात्रा होने के बावजूद लोग प्यासे हैं। बता सकते हो ऐसा क्यों? इस दुर्लभता का कारण है, जल की खराब गुणवत्ता, यह किसी भी राज्य या देश के लिए चिंतनीय विषय है। घरेलू एवं औद्योगिक-अवशिष्टों, रसायनों, कीटनाशकों और कृषि में प्रयुक्त होने वाले उर्वरक जल में मिल जाने से जल की गुणवत्ता बुरी तरह प्रभवित हुई है जो मानव के लिए अति नुकसानदेह है। बिहार एवं पश्चिम बंगाल के कुछ भागों में जल के अतिदोहन से संखिया (Arsenic) एवं राजस्थान एवं महाराष्ट्र में इससे फ्लोराइड के संकेन्द्रण में वृद्धि हुई है। सीवेज एवं जल मल से भारत के अधिकांश नगरीय क्षेत्र में धरातलीय जल दुष्प्रभावित हुए हैं। भारत की अधिकतर नदियां आज प्रदूषित हो गई हैं। अनेक छोटी नदियाँ तो अत्यंत ही विषैली हो गई हैं।

जल संरक्षण एवं प्रबंधन की आवश्यकता :

आपने अनुभव किया होगा कि जल संसाधन की सीमित आपूर्ति, तेजी से फैलते प्रदूषण एवं समय की मांग को देखते हुए जल संसाधनों का संरक्षण एवं प्रबंधन अपरिहार्य है, जिससे स्वस्थ- जीवन, खाद्यान्न-सुरक्षा, आजीविका और उत्पादक अनुक्रियाओं को सुनिश्चित किया जा सके और नैसर्गिक परिवर्तनों के निम्नीकरण पर विराम लग सके।

जल संसाधन के दुर्लभता या संकट निवारण हेतु सरकार ने 'सितम्बर 1987' में 'राष्ट्रीय जल नीति' को स्वीकृत किया। कालान्तर में कई समस्याओं के उभरने के कारण इसे संशोधित कर 'राष्ट्रीय जल नीति 2002' के रूप में प्रस्तुत किया गया। इसके अंतर्गत सरकार ने जल संरक्षण हेतु निम्न सिद्धांतों को ध्यान में रखकर योजनाओं को निर्मित किया गया है :-

(a) जल की उपलब्धता को बनाये रखना।

(b) जल को प्रदूषित होने से बचाना।

(c) प्रदूषित जल को स्वच्छ कर उसका पुनर्चक्रण।

इस संदर्भ में अग्रांकित संरक्षण विधियाँ कारगर सिद्ध हो सकती है :

(1) भूमिगत जल की पुर्नपूर्ति : पूर्व राष्ट्रपति अब्दुल कलाम ने 'जल मिशन' संदर्भ देकर भूमि जल पुनपूर्ति पर बल दिया था। जिससे खेतों, गाँवों, शहरों, उद्योगों को पर्याप्त जल मिल सके। इसके लिए वृक्षारोपण जैविक तथा कम्पोस्ट खाद के प्रयोग, वेटलैंडस (Wetlands) का संरक्षण, वर्षा जल के संचयन एवं मल-जल शोधन पुनःचक्रण जैसे क्रियाकलाप उपयोगी हो सकते हैं।

क्या आप जानते हैं?
शहरीकरण, भवन-निर्माण, रेलमार्ग तथा सड़क-पक्कीकरण भूमि जल-पुर्नपूर्ति के बाधक तत्व हैं।

(2) जल संभर प्रबंधन (Watershed Management) : जल प्रवाह या जल जमाव का उपयोग कर उद्यान, कृषि वानिकी, जल कृषि एवं कृषि उत्पादन को बढ़ाया जा सकता है। इससे पेय जलापूर्ति भी की जा सकती है। इस प्रबंधन को छोटे इकाईयों पर लागू करने की आवश्यकता है।

(3) तकनीकी विकास : तकनीकी विकास से तात्पर्य है ऐसे उपक्रम जिसमें जल का कम से कम उपयोग कर अधिकाधिक लाभ लिया जा सके। जैसे-ड्रिप सिंचाई, लिफ्ट सिंचाई, सूक्ष्म फुहारों (Micro Sprinkler) से सिंचाई, सीढ़ीनुमा खेती इत्यादि।

वर्षा जल संग्रहण एवं उसका पुनःचक्रण :

क्या आप जानते हैं?
भूमिगत जल का 22% भाग का संचय वर्षा-जल का भूमि में प्रवेश करने से होता है।

आप जान चुके हैं कि जल दुलर्भता एवं उनकी निम्नीकरण वर्त्तमान समय की एक प्रमुख समस्या बन गयी है। बहुउद्देशीय परियोजनाओं के विफल होने तथा इसके विवादास्पद होने के कारण वर्षा जल-संग्रहण एक लोकप्रिय जल संरक्षण का तरीका हो सकता है। प्राचीन भारत में उत्कृष्ट जलीय निर्माण एवं जल-संग्रहण ढ़ाँचे पाये जाते थे। तत्कालीन भारतीयों को वर्षा पद्धति एवं मृदा गुणों का गहरा ज्ञान था। उन्होंने स्थानीय पारि-परिस्थितियों में वर्षा-जल, भौमजल, नदी-जल, बाढ़-जल के उपयोग के अनेक तरीके विकसित किये थे। पहाड़ी क्षेत्रों में 'गुल' अथवा कुल (प० हिमालय) जैसी वाहिकाएँ, नदी की धारा का रास्ता बदलकर खेतों में सिचांई के लिए बनाई है। पश्चिम भारत, खासकर राजस्थान, में पेयजल हेतु वर्षा-जल का संग्रहण छत पर करते थे। पश्चिम बंगाल में बाढ़ के मैदान में सिंचाई के लिए बाढ़ जल वाहिकाएँ बनाने का चलन था। शुष्क एवं अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में वर्षा-जल को एकत्रित करने के लिए गड्ढ़ों का निर्माण किया जाता था, जिससे मृदा सिंचित कर खेती की जा सके। उसे राजस्थान के जैसलमेर में 'खादीन' तथा अन्य क्षेत्रों में 'जोहड़' के नाम से पुकारा जाता है। राजस्थान के बीरानो फलोदी और बाड़मेर जैसे शुष्क क्षेत्रों में पेय-जल का संचय भूमिगत टैंक में किया जाता है। जिसे 'टाँका' कहा जाता है। यह प्रायः आंगन में हुआ करता है जिसमें छत पर संग्रहित जल को पाइप के द्वारा जोड़ दिया जाता है। इस कार्य में राजस्थान की N.G.O. (Non-Governmental Organisation) 'तरूण भारत संघ' पिछले कई वर्षों से कार्य कर रही है। मेघालय के शिलांग में छत वर्षा जल संग्रहण आज भी परम्परागत रूप में प्रचलित है।

क्या आप जानते हैं?
मेघालय स्थित चेरापूँजी एवं मॉसिनराम में विश्व की सर्वाधिक वर्षा होती है। जहाँ पेय जलसंकट का निवारण लगभग (25%) छत जल संग्रहण से होता है।

ABDIEL SOLUTIONS ABSOL PATNA

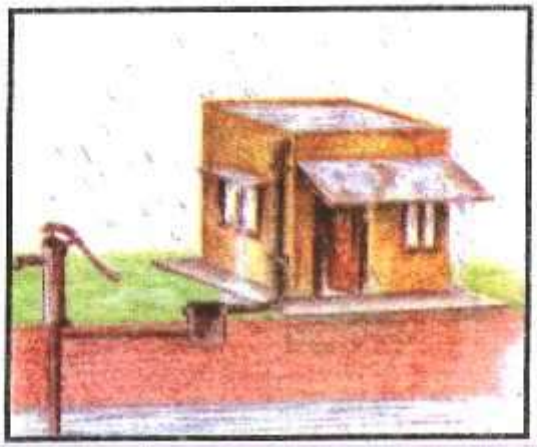

चित्र-1 (घ) : (अ) हैंडपंप के माध्यम से पुनर्भरण

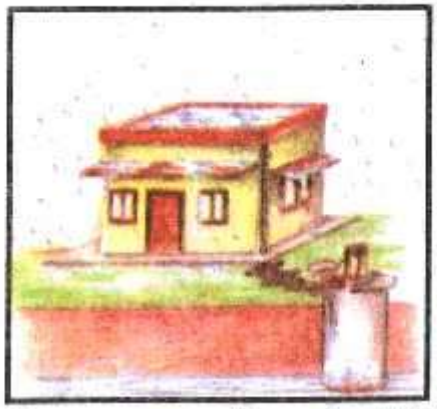

चित्र-1 (घ) : (ब) बेकार पड़े कूएँ के माध्यम से पुनर्भरण (छत वर्षाजल संग्रहण)

प० राजस्थान में इंदिरा गाँधी नहर के विकास से इस क्षेत्र को बारहमासी पेयजल उपलब्ध होने के कारण से यहाँ वर्षाजल संग्रहण की उपेक्षा हो रही है, जो खेद जनक है । परन्तु, कुछ घरों में आज भी टाँका उपलब्ध है।

कर्नाटक के मैसूर जिले में स्थित गंडाथूर गाँव में छत जल संग्रहण की व्यवस्था 200 घरों में है जो जल संरक्षण की दिशा में एक मिसाल है। इनके ढाँचों की जानकारी चित्र 3.4 से स्पष्ट है। वर्तमान समय में महाराष्ट्र, म०प्र०, राजस्थान एवं गुजरात सहित कई राज्यों में वर्षा जल संरक्षण एवं पुनः चक्रण किया जा रहा है।

एक कुल से जुड़ा ग्रामीण तालाब बनता है (काला गाँव के चित्र के अनुसार), जिससे जरूरत पड़ने पर पानी छोड़ सकते हैं।

चित्र-3.5-वर्षाजल संग्रहण की पारंपरिक विधि

सोन परियोजना-एक अध्ययन :

स्वतंत्रोपरांत भारत में आर्थिक, सामाजिक, व्यापारिक सहित समग्र विकास के उद्देश्य से जल संसाधन के उपयोग हेतु योजनायें तैयार की गई। नदी-घाटी जल के बहुआयामी उपयोग के कारण इस परियोजना को बहुउद्देशीय परियोजना की भी संज्ञा दी गई, जिसपर पूर्व में चर्चा की गई

है। बिहार में भी इन उद्देश्यों को ध्यान में रखकर कई परियोजनाएँ बनायी गई हैं, जिनमें तीन प्रमुख हैं– 1. सोन परियोजना 2. गंडक परियोजना, 3 कोसी परियोजना।

सोन नदी-घाटी परियोजना बिहार की सबसे प्राचीन परियोजना के साथ-साथ यहाँ की पहली परियोजना है। ब्रिटिश सरकार ने सिंचित भूमि में वृद्धि कर अधिकाधिक फसल उत्पादन की दृष्टि से इस परियोजना का विकास 1874 ई० में किया था। इसमें डेहरी के समीप पूरब एवं पश्चिम दिशाओं में नहरें निकाली गयी हैं। इसकी कुल लंबाई 130 कि०मी० है। पूरब की नहर से पटना, गया, तथा औरंगाबाद जिले की लगभग 3 लाख हेक्टेयर भूमि सिंचित होती है। इस नहर की पश्चिमी शाखा से तीन उपशाखाओं का निर्माण हुआ है। पहली शाखा भोजपुर तथा दूसरी शाखा बक्सर जिले को सिंचित करती है। तीसरी शाखा का प्रभाव चौसा क्षेत्र में है। इस प्रकार ये त्रिशाखाएँ रोहतास, बक्सर एवं भोजपुर तीन जिलों को प्रभावित करती हैं। सुविकसित रूप से यह नहर तीन लाख हेक्टेयर भूमि को सिंचित करती हैं।

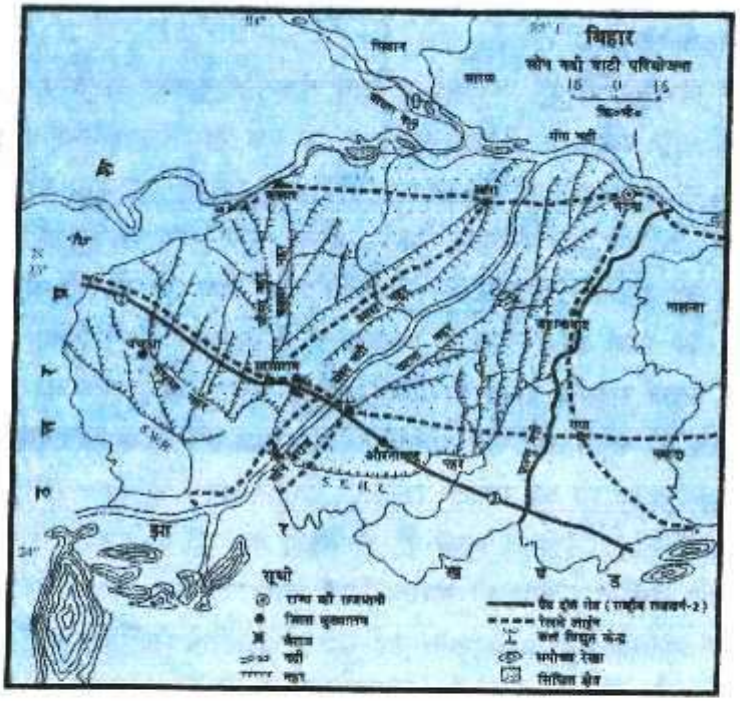

1968 ई० में इस योजना के डेहरी से 10 किमी० की दूरी पर स्थित इन्द्रपुरी नामक स्थान पर बाँध लगाकर बहुउद्देशीय परियोजना का रूप देने का प्रयास किया गया। इससे पुराने नहरों, जल का बैराज से पुर्नपूर्ति, नहरी विस्तारीकरण एवं सुदृढ़ीकरण हुआ है। यही वजह है कि सोन का यह सूखाग्रस्त प्रदेश आज बिहार का 'चावल का कटोरा' (Rice bowl of Bihar) के नाम से विभूषित हो रहा है।

इस परियोजना के अंतर्गत जल-विद्युत उत्पादन हेतु शक्ति-गृह भी स्थापित हुए हैं। पश्चिमी नहर पर डेहरी के समीप शक्ति-गृह की स्थापना की गई है। जिससे 6.6 मेगावाट ऊर्जा प्राप्त होती है। इस ऊर्जा का उपयोग डालमियानगर का एक बड़े औद्योगिक-प्रतिष्ठान के रूप में उभर रहा है। इसके अतिरिक्त पूर्वी नहर शाखा पर बारूण नामक स्थल पर भी शक्ति गृह लगाये गये हैं। जहाँ 3.3 मेगावाट विद्युत उत्पादन की जा रही है। इस परियोजना के नहरों का पुनरोद्धार हो रहा है। सोन की सहायक नदी रिहन्द के जल का उपयोग उत्तर प्रदेश सरकार करती है। जिससे सोन को जल की कमी झेलनी पड़ती है। बिहार सरकार उत्तर प्रदेश सरकार से वार्ता के माध्यम से सार्थक समाधान के लिए पहल कर रही है।

बिहार विभाजन के पूर्व 'इन्द्रपुरी जलाशय योजना', 'कदवन जलाशय योजना' के नाम से जानी जाती थी। इस योजना के विकास के लिए भी एक बांध का निर्माण प्रस्तावित है। जिसके निर्माण से सोन परियोजना की सिंचाई को स्थायित्व मिल सकेगा और साथ ही 450 मेगावाट जल विद्युत का भी उत्पादन हो सकेगा। यद्यपि इसके स्रोत तीन राज्यों के अधीन है, जिसमें बिहार-झारखंड की समन्वित सहमति बन चुकी है। उत्तर प्रदेश की सहमति अभी भी प्रतिक्षित है। बिहार सरकार के ऊर्जा विभाग ने इस योजना के कार्यान्वयन हेतु राष्ट्रीय जल विद्युत निगम (NHPC) को सशर्त सहमति दे दी है। इसके अंतर्गत NHPC इस बांध का निर्माण जल-विद्युत उत्पादन की दृष्टि से करेगा तथा जल-संसाधन-विभाग जल की आवश्यकतानुसार इस नहर प्रणाली का सिंचाई हेतु संचालन भी कर सकेगा। NHPC संबंधित राज्यों के बीच सहमति एवं केन्द्रीय जल आयोग इस परियोजना को स्वीकृत करने की कार्यवाही कर रही है। इस परियोजना का बिहार जल विद्युत परियोजना (BHPC) द्वारा भी प्रबंधन कार्य प्रगति पर है।

इसके अतिरिक्त भी बिहारान्तर्गत कई नदी घाटी परियोजनाएँ प्रस्तावित हैं; जिसके विकास की आवश्यकता है। जिनमें, दुर्गावती जलाशय परियोजना, ऊपरी किऊल जलाशय परियोजना, बागमती परियोजना तथा बरनार जलाशय परियोजना।

अभ्यास प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न :

1. वृहद् क्षेत्र में जल की उपस्थिति के कारण ही पृथ्वी को कहते हैं–

   (क) उजला ग्रह (ख) नीला ग्रह

   (ग) लाल ग्रह (घ) हरा ग्रह

2. कुल जल का कितना प्रतिशत भाग महासागरों में निहित है?

   (क) 9.5% (ख) 95.5%

   (ग) 96% (घ) 96.6%

3. देश के बांधों को किसने 'भारत का मंदिर' कहा था?

   (क) महात्मा गाँधी (ख) डॉ० राजेन्द्र प्रसाद

   (ग) पंडित नेहरू (घ) स्वामी विवेकानन्द

4. प्राणियों के शरीर में कितना प्रतिशत जल की मात्रा निहित होती है?

   (क) 55% (ख) 60%

   (ग) 65% (घ) 70%

5. बिहार में अति-जल-दोहन से किस तत्त्व का संकेन्द्रण बढ़ा है?

   (क) फ्लोराइड (ख) क्लोराइड

   (ग) आर्सेनिक (घ) लौह

ABDIEL SOLUTIONS ABSOL PATNA

लघुउत्तरीय प्रश्न :

1. बहुउद्देशीय परियोजना से आप क्या समझते हैं?
2. जल संसाधन के क्या उपयोग हैं? लिखें।
3. अंतर्राज्यीय जल-विवाद के क्या कारण हैं?

4. जल संकट क्या है?

5. भारत की नदियों के प्रदूषण के कारणों का वर्णन कीजिए।

दीर्घउत्तरीय प्रश्न :

1. जल संरक्षण से आप क्या समझते हैं? इसके क्या उपाय हैं?

2. वर्षा जल की मानव जीवन में क्या भूमिका है ? इसके संग्रहण व पुनः चक्रण के विधियों का उल्लेख करें।

परियोजना कार्य :

1. अपने विद्यालय के आस-पास बहने वाली नदियों के जल-उपयोग पर एक परियोजना तैयार करें।

क्रियाकलाप :

1. अपने आस-पास के क्षेत्रों में भूमिगत जल-स्तर वृद्धि के स्रोतों की तलाश करें एवं उसकी योजना बनायें।

2. अंतर्राज्यीय जल विवाद की सूची तैयार करें।

ABSOL SOLUTIONS PATNA

(ग) वन एवं वन्य प्राणी संसाधन

''यह सत्य है कि 'आग' पर नियंत्रण मानवसभ्यता का महान अविष्कार है, किन्तु इस महान अविष्कार ने विनाश की इति श्री भी किया और इसकी सबसे पहली आहुती वन एवं वन्य प्राणियों की हुई जब पके हुए मांस का रसास्वादन हुआ तो वन्य प्राणियों का आखेट एवं पकाने तथा भूनने के लिए ईंधन ससांधन के रूप में वनों की लकड़ियों का उपयोग एक आम बात हो गयी।''

वन एवं वन्य प्राणी मानव जीवन के प्रमुख हमसफर हैं। वन पृथ्वी के लिए सुरक्षा कवच जैसा है। यह केवल एक संसाधन ही नहीं बल्कि पारिस्थैतिक तंत्र के निर्माण में महत्वपूर्ण घटक हैं। हमारा इनसे अटूट सम्बंध है। वास्तव में वन प्रकृति का एक अमूल्य

क्या आप जानते हैं?

वन उस बड़े भू भाग को कहते हैं जो पेड़ पौधों एवं झाड़ियों द्वारा आच्छादित होते हैं। वे वन जो स्वतः विकसित होते हैं उसे प्राकृतिक वन और जो मानव द्वारा विकसित किए जाते हैं वह मानव निर्मित वन (वानिकी) कहलाते हैं। वन जैव-विविधताओं का आवास होता है।

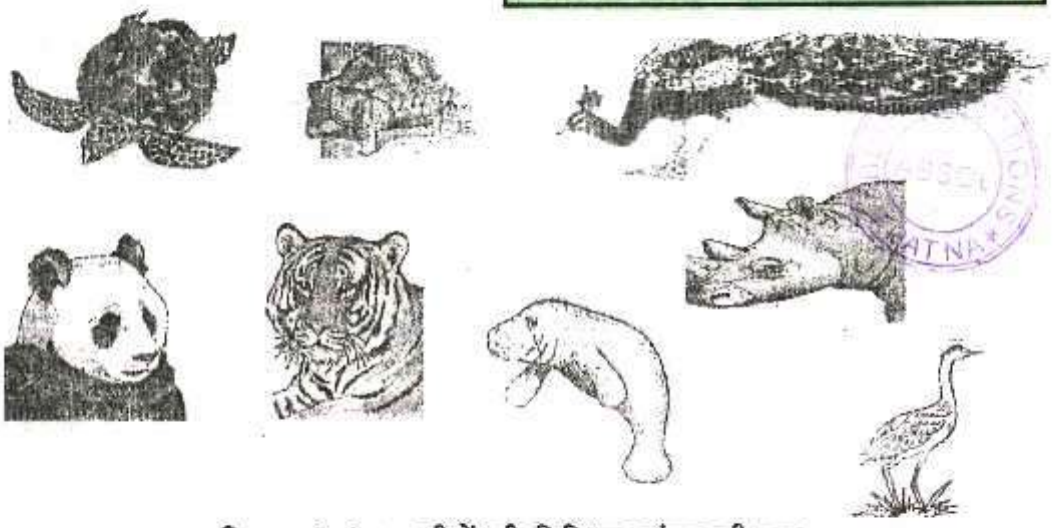

चित्र-1 (ग).1 : जीवों की विविधता-जंगल की शान

उपहार है। सृष्टि के आरम्भ से ही मानव इसके आँचल में पोषित होता रहा है। वन एवं वन्य प्राणी मानव के लिए प्रतिस्थापित होने वाला संसाधन है। यह इस जीव मंडल में सभी जीवों को संतुलित स्थिति में जीने के लिए अथवा संतुलित पारिस्थितिकी तंत्र के निमार्ण में सर्वाधिक योगदान देता है। क्योंकि सभी जीवों के लिए खाद्य ऊर्जा (Food Energy) का प्रारम्भिक स्रोत वनस्पति ही है।

भारत में वन संसाधन एक महत्वपूर्ण संसाधन है। यहाँ के लोग आरम्भ से वन प्रिय रहे हैं, जिसका प्रमाण हमें धार्मिक ग्रंथों तथा लोक कथाओं से मिलता है। किन्तु वर्तमान समय में विकास की दौड़ में हमने अपने अतीत के सभी गौरवशाली परम्पराओं को नकार दिया है। हम वन और वन्य प्राणी के महत्व को नहीं समझ रहे हैं और तेजी से इस संसाधन का विदोहन कर रहे हैं। वस्तुतः हमें वन और वन्य-जीव संसाधनों को संरक्षण देना चाहिए।

वन और वन्य जीव संसाधनों के प्रकार और वितरण :

वन विस्तार के नजरिए से भारत विश्व का दसवाँ देश है, यहाँ करीब 68 करोड़ हेक्टेयर भूमि पर वन का विस्तार है। रूस में 809 करोड़ हेक्टेयर वन क्षेत्र है, जो विश्व में प्रथम है। ब्राजील में 478 करोड़ हेक्टेयर, कनाडा में 310 करोड़ हेक्टेयर, संयुक्त राज्य अमेरिका में 303 करोड़ हेक्टेयर, चीन में 197 करोड़ हेक्टेयर, आस्ट्रेलिया में 164 करोड़ हेक्टेयर, कांगों में 134 करोड़ हेक्टेयर, इंडोनेशिया में 88 करोड़ हेक्टेयर और पेरू में 69 करोड़ हेक्टेयर वन क्षेत्र है।

एफ० ए० ओ० (Food and Agriculture Organisation) की वानिकी रिपोर्ट के अनुसार वर्ष 1948 में विश्व में 4 अरब हेक्टेयर वन क्षेत्र था जो 1963 में घट कर 3.8 अरब हेक्टेयर हो गया और 1990 में 3.4 अरब हेक्टेयर वन क्षेत्र बच गया, किन्तु 2005 में इसमें कुछ सुधार आया और स्थिति लगभग 1948 के समान हो गई अर्थात कुल वन क्षेत्र 3.952 अरब हेक्टेयर हो गया है। यह विश्व के भौगोलिक क्षेत्र का लगभग 30 प्रतिशत है। भारत में, 2001 में 19.27 प्रतिशत भौगोलिक क्षेत्र पर वन फैले हुए थे (वन सर्वेक्षण, FSI) के अनुसार 20.55% भौगोलिक क्षेत्र में वन का विस्तार है । आई० आर० एस० पी० 6 संसाधन उपग्रह लीस III (LIS III एक सूदूर संवेदी उपग्रह Remote Sensing Satellite है जिसमें स्कैनर के साथ कैमरे लगे होते हैं) की इमेजरी से भारतीय वन के वास्तविक स्थिति को जानने में बहुत सहायता प्राप्त हुआ है। इसकी

दसवीं रिपोर्ट 2005 के अनुसार देश में कुल 67.71 करोड़ हेक्टेयर वन क्षेत्र है जोकि देश के कुल भौगोलिक क्षेत्र का 20.60 प्रतिशत है।

भारत में वनों का विस्तार एक समान नहीं है, यहाँ का पूर्वोत्तर राज्य एवं मध्यप्रदेश वनों की दृष्टि से काफी समृद्ध है, किंतु अडमान निकोबार द्वीप समूह सबसे आगे है, जहाँ 90.3 प्रतिशत भौगोलिक क्षेत्र में वन विकसित हैं। वृक्षों के घनत्व के आधार पर वनों को पांच वर्गों में रखा जा सकता है।

1. अत्यंत सघन वन (कुल भौगोलिक क्षेत्र में वृक्षों का घनत्व 70 प्रतिशत से अधिक)
2. सघन वन (कुल भौगोलिक क्षेत्र में वृक्षों का घनत्व 40-70 प्रतिशत)
3. खुले वन (कुल भौगोलिक क्षेत्र में वृक्षों का घनत्व 10 से 40 प्रतिशत)
4. झाड़ियाँ एवं अन्य वन (कुल भौगोलिक क्षेत्र में वृक्षों का घनत्व 10 प्रतिशत से कम)
5. मैंग्रोव वन (तटीय वन)

1. अत्यंत सघन वन- भारत में इस प्रकार के वन का विस्तार 54.6 लाख हेक्टेयर भूमि पर है जो कुल भौगोलिक क्षेत्र का 1.66 प्रतिशत है, असम और सिक्किम को छोड़कर सभी पूर्वोत्तर राज्य इस वर्ग में आते हैं। इन क्षेत्रों में वनों का घनत्व 75 प्रतिशत से अधिक है।

2. सघन वन- इसके अन्तर्गत 73.60 लाख हेक्टेयर भूमि आते हैं जो कुल भौगोलिक क्षेत्र का 3 प्रतिशत है। हिमाचल प्रदेश, सिक्किम, मध्य प्रदेश, जम्मू-कश्मीर, महाराष्ट्र एवं उत्तराखंड के पहाड़ी क्षेत्रों में इस प्रकार के वनों का विस्तार है। यहाँ वनों का घनत्व 62.99 प्रतिशत है।

3. खुले वन- 2.59 करोड़ हेक्टेयर भूमि पर इस वर्ग के वनों का विस्तार है, यह कुल भौगोलिक क्षेत्र का 7.12 प्रतिशत है कर्नाटक, तामिलनाडु, केरल, आंध्रप्रदेश, उड़ीसा के कुछ जिलों एवं असम के 16 आदिवासी जिलों में इस प्रकार के वनों का विस्तार है। असम के आदिवासी जिलों में वृक्षों क घनत्व 23.89 प्रतिशत है।

4. झाड़ियां एवं अन्य वन- राजस्थान का मरूस्थलीय क्षेत्र एवं अर्द्ध शुष्क क्षेत्र में इस प्रकार के वन पाए जाते है। पंजाब, हरियाणा, उत्तरप्रदेश, बिहार एवं पश्चिमी बंगाल के मैदानी भागों में वृक्षों का घनत्व 10 प्रतिशत से भी कम है इसलिए यह क्षेत्र इसी वर्ग में सम्मिलित है। इसके अन्तर्गत 2.459 करोड़ हेक्टेयर भूमि आते हैं, जो कुछ भौगोलिक क्षेत्र का 8.68 प्रतिशत है।

5. मैंग्रोव (तटीय वन)- विश्व के तटीय वन क्षेत्र (मैंग्रोव्स) का मात्र 5 प्रतिशत (4,500 कि०मी० क्षेत्र ही भारत में है, जो समुद्र तटीय राज्यों मे फैला है, जिसमें आधा क्षेत्र पश्चिमी बंगाल के सुंदरबन में है, इसके बाद गुजरात और अंडमान-निकोबार द्वीप समूह आते हैं, कुल मिलाकर 12 राज्यों केन्द्रप्रशासित प्रदेशों में मैंग्रोव्स वन हैं, जिन में आंध्रप्रदेश, गुजरात, कर्नाटक, महाराष्ट्र, उड़ीसा, तामिलनाडु, पश्चिमी बंगाल, अंडमान-निकोबार, पड्डूचेरी, केरल एवं दमन-दीव शामिल हैं।

देश के कुल भौगोलिक क्षेत्र का मात्र 0.14 प्रतिशत क्षेत्र (4.4 लाख हेक्टेयर) में ही मैंग्रोव है। पश्चिमी बंगाल में सबसे बड़ा क्षेत्र अर्थात 47.6 प्रतिशत क्षेत्र इसके अन्तर्गत है जबकि गुजरात दुसरे स्थान पर है, यहाँ 21 प्रतिशत क्षेत्र में मैंग्रोव्स का विस्तार है और तीसरे स्थान पर अंडमान निकोबार द्वीप समूह है, जहाँ मात्र 14 प्रतिशत क्षेत्र में मैंग्रोव्स फैला है।

क्या आप जानते हैं?

- देश के कुल वनाच्छादित क्षेत्र का 25.11 प्रतिशत वन क्षेत्र पूर्वोत्तर के सात राज्यों में हैं।
- भारत में 188 आदिवासी जिलों में कुल वन क्षेत्र का 60.11 प्रतिशत पाया जाता है।
- देश में वनाच्छादित क्षेत्र के मामले में मध्यप्रदेश का प्रथम स्थान है, जहाँ देश के कुल वनाच्छादित क्षेत्र का 11.22 प्रतिशत वन है । दूसरे स्थान पर अरूणाचल प्रदेश (10.01 प्रतिशत), तीसरे स्थान पर छत्तीसगढ़ (8.25 प्रतिशत), चौथे स्थान पर उड़ीसा (7.18 प्रतिशत) है जबकि महाराष्ट्र का स्थान पाँचवाँ है जहाँ (7.01) प्रतिशत) वन क्षेत्र हैं ।
- संसार में मात्र 3.च बिलियन हेक्टेयर में वन रह गया है, लगभग 800 वर्ष पूर्व से 6 बिलियन हेक्टेयर वनों की कटाई हो चूकी है।
- हाल के वर्षो में वन विकास में भारत चीन के बाद दूसरे स्थान पर है।

बिहार विभाजन के बाद वन विस्तार में बिहार राज्य दैनीय स्थिति में आ गया हैं, क्योंकि वर्तमान बिहार में अधिकतर भूमि कृषि योग्य हैं। मात्र 6764.14 हेक्टेयर में वन क्षेत्र बच गया है, यह भौगोलिक क्षेत्र का मात्र 7.1 प्रतिशत है। बिहार के 38 जिलों में से 17 जिलों से वन क्षेत्र

ABDIEL SOLUTIONS ABSOL PATNA

समाप्त हो गया हैं। पश्चिमी चम्पारण, मुंगेर, बांका, जमुई, नवादा, नालन्दा, गया, रोहतास, कैमूर, और औरंगाबाद जिलों के वनों की स्थिति कुछ बेहतर है, जिसका कुल क्षेत्रफल 3700 वर्ग किलोमीटर है। शेष में अवक्रमित वन क्षेत्र हैं, वन के नाम पर केवल झाड़ झुरमुट बच गऐ हैं।

प्रशासकीय दृष्टि से वनों को निम्नांकित वर्गों में रखा गया है :

(क) आरक्षित वन (Reserved Forest)- जो वन जलवायु की दृष्टि से महत्वपूर्ण होते हैं उनहें आरक्षित वन कहते हैं। इसमें ना तो लकड़ियां ही काटी जा सकती हैं और ना ही पशुचारण होता है । बाढ़ नियंत्रण, भूमि संरक्षण, मरूस्थल प्रसार को रोकने तथा जलवायु नियमित रहने हेतु इसकी आवश्यकता होती है। वन एवं वन्य जीवों के संरक्षण के लिए आरक्षित वनों को सबसे अधिक मूल्यवान माना जाता है। देश में आधे से अधिक वन क्षेत्र (54प्रतिशत) आरक्षित वन घोषित किए गऐ हैं।

(ख) रक्षित वन (Protected Forest)- इस वन क्षेत्र में विशेष नियमों के अधिन पशुओं को चराने और सीमित रूप में लकड़ी काटने की सुविधा दी जाती है। वनों के अत्यधिक नष्ट होने से बचाने के लिए इसकी सुरक्षा की जाती हैं। वन विभाग के अनुसार कुल वन क्षेत्र का लगभग एक तिहाई हिस्सा (29 प्रतिशत) रक्षित वन है।

(ग) अवर्गीकृत वन (Unclassified Forest)- शेष सभी प्रकार के वन और बंजर भूमि जो सरकार, व्यक्तियों, समुदायों के स्वामित्व में होते हैं, स्वतंत्र एवं अवर्गीकृत वन के अन्तर्गत रखा गया है। इस प्रकार के वनों में लकड़ी काटने और पशुओं को चराने पर सरकार की ओर से कोई प्रतिबंध नहीं है। सरकार इसके लिए शुल्क लेती है। कुल वन क्षेत्र का 17 प्रतिशत अवर्गीकृत वन है।

आरक्षित एवं रक्षित वन का सबसे अधिक विस्तार मध्यप्रदेश में है। जहाँ कुल वन क्षेत्र का 75 प्रतिशत है । इसके अतिरिक्त जम्मू-कश्मीर, आंध्रप्रदेश, उत्तराखण्ड, केरल, तामिलनाडु, पश्चिमी बंगाल और महाराष्ट्र में भी कुल वनों का एक बड़ा अनुपात आरक्षित वनों का है, जबकि बिहार, हरियाणा, पंजाब, हिमाचल प्रदेश, उड़ीसा और राजस्थान में कुल वनों में रक्षित वनों का एक बड़ा अनुपात रक्षित है। पूर्वोत्तर के सभी राज्यों में और गुजरात में अधिकतर वन क्षेत्र अवर्गीकृत हैं और स्थानीय समुदायों के प्रबंधन में हैं।

वन सम्पदा तथा वन्य जीवों का ह्रास एवं संरक्षण :

वन सम्पदाओं के ह्रास उपनिवेश काल से ही शुरू हो गया था क्योंकि अंग्रेजों ने प्रशासनिक एवं व्यापारिक उद्देश्य से रेल मार्गों एवं सड़कों का विकास किया जिसके कारण वनों का विदोहन होने लगा था, लेकिन आजादी के बाद से वन एवं वन्य जीवों पर लगातार आक्रमण होने लगा। दरअसल विकास के नाम पर वनों का विनाश होना शुरू हुआ। बीसवीं सदी के मध्य तक 24 प्रतिशत क्षेत्र पर वन विस्तार था, जो इक्कीसवीं सदी के आरम्भ में ही संकुचित होकर 19 प्रतिशत क्षेत्र में रह गया है। इसका मुख्य कारण मानवीय हस्तक्षेप, पालतू पशुओं के द्वारा अनियंत्रित चारण एवं विविध तरीकों से वन सम्पदा का दोहन है। भारतीय वन सर्वेक्षण की अद्यतन रिपोर्ट के अनुसार भारत में वनों की उत्पादकता 0.5 घन मीटर प्रतिवर्ष है, जबकि विस्तार की दृष्टि से यह 2.1 घन मीटर है।

भारत में वनों के ह्रास का एक बड़ा कारण कृषिगत भूमि का फैलाव है। एक सर्वेक्षण के अनुसार 1951 और 1980 के बीच लगभग 26,200 वर्ग किलोमीटर वन क्षेत्र कृषि में परिवर्तित हो गया। विशेष रूप से पूर्वोत्तर और मध्य भारत में जनजातीय क्षेत्र में स्थानान्तरी (झूम) खेती अथवा स्लैश 'और बर्न' खेती के चलते वनों का ह्रास हुआ है।

बड़ी विकास योजनाओं से भी वनों को बहुत नुकसान हुआ है। 1952 ई० से नदी घाटी परियोजनाओं के कारण 5000 वर्ग किमी० से अधिक वन क्षेत्रों को नष्ट करना पड़ा। इस प्रकार अभी भी कई परियोजनाएँ चल रही हैं, जिससे वनों के विनाश का क्रम जारी है। तेजी से खनन कार्य के कारण भी वनों का क्षरण होता रहा है। पश्चिमी बंगाल मे टाईगर रिजर्व डोलोमाई के खनन के कारण भारी खतरे में है। इस खनन से कई प्रजातियों के प्राकृतिक आवासों को नुकसान हुआ है।

वनों एवं वन्य जीवों के विनाश में पशुचरण और इंधन के लिए लकड़ियों के उपयोग की भी काफी भूमिका रही है। रेल-मार्ग, सड़क मार्ग निर्माण, औद्योगिक विकास एवं नगरीकरण ने भी वन विस्तार को बड़े पैमाने पर तहस-नहस किया है।

कुछ पर्यावरण विशेषज्ञों के अनुसार भारत के कई क्षेत्रों में संवर्द्धन (Enrichment) 'वृक्षारोपण' अर्थात् वाणिज्य की दृष्टि से एकल वृक्ष रोपण करने से पेड़ों की दूसरी प्रजातियाँ खत्म

हो गई। उदाहरण के तौर पर सागवान के एकल रोपण से दक्षिण भारत में अन्य प्राकृतिक वन बर्बाद हो गऐ और हिमालय में चीड़ पाईन के रोपन से हिमालय ओक और रोडोडेंड्रोन (Rhododendron) वनों का नुकसान हुआ।

हिमालय यव (Yew) संकट में-

हिमालय यव (चीड़ के प्रकार का सदाबहार वृक्ष) एक औषधीय पौधा है जो हिमाचल प्रदेश और अरूणाचल प्रदेश के कई क्षेत्रों में पाया जाता है। चीड़ी की छाल, पत्तियाँ, टहनियों और जड़ों से टैकसोल (Taxol) नामक रसायन निकाला जाता है तथा इसे कैंसर रोगों के उपचार के लिए प्रयोग किया जाता है। इस से बनाई गई दवाई विश्व में सबसे अधिक बिकने वाली कैंसर औषधि है। इसके अत्याधिक निष्कासन से इस वनस्पति जाति के लिए अस्तित्व का संकट पैदा हो गया है। पिछले एक दशक में हिमाचल प्रदेश और अरूणाचल प्रदेश में विभिन्न क्षेत्रों में यव के हजारों पेड़ विलुप्त हो चुके है।

जैसे-जैसे वनों का दामन सिकुड़ा, वैसे-वैसे वन जीवों का आवास भी तंग होता गया। भोजन सुरक्षा, एवं आनन्द के लिए वन्य जीवों का शिकार वनीय जीवों के विनाश का एक बड़ा कारण है। आज स्थिति यह है कि बहुत से वन्य प्राणी लुप्त हो गए हैं या लुप्त प्राय हैं। भारत में चीता और गिद्ध इसके उदाहरण हैं। यदि हम गौर से अवलोकन करें तो पता चलेगा कि पर्यावरण के प्रति हमारी संवेदनहीनता के ही कारण कई दशकों से वन एवं जीवों पर विनाशकारी दबाव बढ़ा है।

क्या आप जानते हैं?

हमारे देश में लगभग 81,000 वन्य प्राणी उपजातियाँ और लगभग 47,000 वनस्पति उपजातियाँ पायी जाती हैं। वनस्पति उपजातियों में से लगभग 15,000 भारतीय मूल की हैं।

क्रिया कलाप :

अपने गांव एवं मुहल्ले में मानव और प्रकृति प्रेम सम्बंधी प्रचलित किस्से, कहानियों एवं गीत का वर्णन करें।

आज भारत में 744 प्रजातियाँ विलुप्त हो चुकी हैं और 22,531 प्रजातियाँ विलुप्त होने के कगार पर है। तालिका 1.1 से लुप्त हो चुके प्रजाति और लुप्त होने वाले प्रजातियों का विवरण मिलता है।

तालिका -1.1

भारत में विलुप्त हो रहे जीव जंतुओं की संख्या

प्रजाति	विलुप्त हो चुकी	विलुप्त होने का खतरा
1. पेड़-पौधे	384	19079
2. मछलियाँ	21	343
3. अभयचर	02	50
4. सरीसृप	21	170
5. बिना रीढ़ वाले जन्तु	98	1355
6. पक्षी	133	1037
7. स्तनपाई	83	497
	कुल 742	**2,2531**

विलुप्त होने के खतरे से घिरे कुछ प्रमुख प्राणी हैं, कृष्णा सार (Black Buck), चीतल (Chinkara), भेड़िया (Wolf), अनूप मृग (Swamp deer), नील गाय (Nilgai), भारतीय कुरंग (Indian Gazelle), बाराहसिंगा (Antelope), चीता (Panther), गेंडा (Rhinos) गिर सिंह (Gir lion), मगर (Corocodile), हसावर (Flamlingo), हवासिल (Pelican), सारंग (Bustard), श्वेत सारस (White crane), घूसर बगुला (Gray heron), पर्वतीय बटेर (Mountain quil), मोर (Peacock), हरा सागर कछुआ (Green Sea Turtle), कछुआ (Tortoise), डियूगाँग (Dug-ong), लाल पाण्डा (Red Panda) आदि।

वन्य जीवों के अधिवास पर प्रतिकूल मानवीय प्रभाव के तीन प्रमुख कारण हैं, जो निम्नांकित हैं :

(i) प्राकृतिक आवासों का अतिक्रमण- वन्य जीवों के प्राकृतिक आवास जंगल, मैदानी क्षेत्र, नदियाँ, तालाब, वेट लैंड, पहाड़ी एवं तराई आदि हैं। जन संख्या में हो रही अनियंत्रित वृद्धि, औद्योगिक विकास, शहरीकरण, बड़े बांध या अन्य परियोजनाएँ इनके आवास की अतिक्रमण कर रही है। यातायात की सुविधाओं में वृद्धि के कारण भी वन्य जीवों के प्राकृतिक आवासों का अतिक्रमण हुआ है। प्राक्रतिक निवास स्थान के छिन जाने के दबाव से वन्य जीवों की सामान्य वृद्धि तथा प्रजनन क्षमता में कमी आ गई है।

क्या आप जानते हैं?
निम्न तलीय जल जमाव वाले क्षेत्र को वेट लैंड कहा जाता है। स्थानीय तौर पर इसे, चौर, भागर मॉन, टाल भी कहा जाता है।

(ii) प्रदूषण जनित समस्या- बढ़ते प्रदूषणों ने कई समस्याओं को जन्म दिया है। इन में वन्य जीवों की संख्या में कमी के प्रमुख कारक पराबैंगनी किरणें, अम्लवर्षा और हरित गृहप्रभाव हैं। इसके अतिरिक्त वायु, जल एवं मृदा प्रदूषण के कारण वन एवं वन्य जीवों का जीवन चक्र गंभीर रूप से प्रभावित हो रहा है। जीवन चक्र को पूर्ण किए बिना नए पौधे या जंतु का जन्म ही नहीं हो सकता है। फलत: वास स्थान उपलब्ध रहने के बावजूद वन्य जीव धीरे-धीरे विलुप्त हो रहे हैं।

(iii) आर्थिक लाभ- रंग-बिरंगी तितलियों से लेकर मेढ़कों, पक्षियों और जंगली जानवरों, कछुआ, तोता एवं अन्य स्थानीय परिंदों का अवैध शिकार कर इन्हें बेचा जाता है। इसकी राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर काला बाजारी होती है। चीन ऐसे वन्य जीवों के काला बाजारी का मुख्य केन्द्र है।

आर्थिक लाभ के लिए योजनाबद्ध तरीके से खास प्रजातियों के पेड़-पौधे एवं जीव-जन्तुओं को स्थानीय, क्षेत्रीय या राज्यस्तर पर दोहित किये जाने से कई प्रजातियाँ संकट ग्रस्त हो गई हैं।

निरंतर शिकार भी वन्य जीवों के लिए एक बड़ी चुनौती है।

वर्तमान में यह एक वैश्विक मुद्दा के रूप में एक बड़े चिन्तन का विषय बना है। इसे अब सामाजिक, सांस्कृतिक, नैतिक, आर्थिक तथा धार्मिक स्तर पर स्वीकारा गया है। यही नहीं

साहित्यविदों, कवियों एवं कलकारों में इसकी चेतना के लिए अपनी रचनाओं में मुख्य रूप से स्थान दिया है। भारत में तो आदि काल से वन एवं वन्य प्रणियों के महत्त्व को स्वीकारा गया है।

प्रत्येक धार्मिक कृत्यों में तथा विभिन्न पौराणिक एवं कर्मकाण्ड साहित्य में वनों और प्राणियों को महत्व दिया गया है। ग्रामीण लोग कई धार्मिक अनुष्ठानों में 100 से अधिक पौधों की प्रजातियों का प्रयोग करते हैं और इन पौधों को अपने खेतों में भी उगाते हैं। भारत के शासकों ने भी प्रकृति संरक्षण पर बल दिया है ईसा पूर्व तीसरी शताब्दी में सम्राट अशोक ने इस ओर ध्यान आकृष्ट किया था शायद यह विश्व का पहला ऐतिहासिक साक्ष्य है कि अशोक ने प्रकृति के महत्व को स्वीकारते हुए वन्य जीव-जन्तुओं के शिकार पर अंकुश और सम्बोधित संरक्षण के नियम को अपने शिलालेखों में अंकित कराया। मध्यकालीन भारत में मुगल साम्राज्य के संस्थापक जहीर उद्दीन बाबर और जहांगीर के आलेखों में भी प्रकृति संरक्षण वाद का उल्लेख मिलता है। मुगल चित्रकला की कृतियों में भी वन एवं वन्य प्राणियों से प्रेम का सम्बोधन होता है।

क्या आप अमृता देवी वन्य संरक्षण प्ररसार के विषय में जानते हैं?

अमृता देवी राजस्थान के विशनोई गाँव (जोधपुर जिला) की रहनेवाली थी। उसने 1731 ई० में राजा के आदेश को दरकिनार कर वनों से लकड़ी काटनेवालों का विरोध किया था। राजा के लिए नवीन महल निर्माण हेतु लकड़ी काटा जाना था। अमृता देवी के साथ गाँव वालों ने भी राजा के आदमियों का विरोध किया। महाराजा को जब इसकी जानकारी मिली तो उन्हें काफी पश्चाताप हुआ और अपने राज्य में वनों की कटाई पर रोक लगा दी।

वर्तमान समय में वन एवं वन्य जीवों के संरक्षण के लिए राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कई कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं। भारत की संकटापन्न पादप प्रजातियों की सूची बनाने का काम सर्वप्रथम 1970 में बॉटेनिकल सर्वे ऑफ इंडिया (BSI) तथा वन अनुसंधान संस्थान (FRI) देहरादून द्वारा संयुक्त रूप से किया गया। इन्होंने जो सूची बनाई उसे 'रेड डेटा बुक' (Red Data book) का नाम दिया गया। इसी क्रम में असाधारण पौधों (Rare Plants) के लिए 'ग्रीन बुक' (GreenBook) तैयार किया गया।

रेड डेटा बुक क्या है ?

इसमें सामान्य प्रजातियों के विलुप्त होने के खतरे से अवगत किया जाता है।

संकटग्रस्त प्रजातियाँ सर्वमान्य रूप से चिह्नित होते हैं।

विश्व स्तर पर, संकटग्रस्त प्रजातियों की एक तुलनात्मक स्थिति के प्रति चेतावनी देती है।

स्थानीय स्तर पर संकटग्रस्त प्रजातियों की पहचान एवं उनके संरक्षण से संबधित कार्यक्रम को प्रोत्साहन देना।

अंतर्राष्ट्रीय प्राकृतिक संरक्षण एवं प्राकृतिक संसाधन संरक्षण संघ (International Union for the Conservation of Nature and Natural Resources) ने संकटग्रस्त प्रजातियों के संरक्षण एवं संवर्धन की दिशा में कार्य कर रही एक महत्वपुर्ण अन्तर्राष्ट्रीय संस्था है।

International union for the Conservation of Nature and Natural Resources (IUCN) को अब विश्व संरक्षण संघ (World Conservation Union) भी कहा जाता है।

इस संस्था ने विभिन्न प्रकार के पौधों और प्राणियों के जातियों को चिह्नित कर निम्नलिखित श्रेणियों में विभाजित किया है :

(क) सामान्य जातियाँ– ये वे जातियाँ हैं जिनकी संख्या जीवित रहने के लिए सामान्य मानी जाती हैं जैसे पशु, साल, चीड़ और कृतन्क (रोडेंटस) इत्यादि ।

(ख) संकटग्रस्त जातियाँ– ये वे जातियाँ हैं जिनके लुप्त होने का खतरा है। जिन विषम परिस्थितियों के कारण इनकी संख्या कम हुई है, यदि वे जारी रहती हैं तो इन जातियों का जीवित रहना कठिन है। काला हिरण, मगरमच्छ, भारतीय जंगली गधा, गेंडा, पूंछ वाला बंदर, संगाई (मणिपुरी हिरण) इत्यादि इस प्रकार की जातियों के उदाहरण हैं।

(ग) सुभेद्य जातियाँ – इसके अन्तर्गत ऐसी जातियों को रखा गया है, जिनकी संख्या घट रही है। यह वैसी जातियाँ हैं जिनपर ध्यान नहीं दिया गया तो यह संकटग्रस्त जातियों की श्रेणी में आ सकते हैं। नीली भेड़, एशियाई हाथी, गंगा की डॉल्फिन आदि इस प्रकार की जातियों के उदाहरण हैं।

(घ) दुर्लभ जातियाँ – इन जातियों की संख्या बहुत कम या सुभेद्य हैं और यदि इनको प्रभावित करने वाली विषम परिस्थितियाँ नहीं परिवर्तित होती हैं तो यह संकटग्रस्त जातियों की श्रेणी में आ सकती हैं।

(ङ) स्थानिक जातियाँ – प्राकृतिक या भौगोलिक सीमाओं से अलग विशेष क्षेत्रों में पाई जाने वाली जातियाँ, अंडमानी टील (teal) निकोबारी कबूतर, अंडमानी जंगली सुअर और अरूणाचल के मिथुन इसी वर्ग में आते हैं।

(च) लुप्त जातियाँ – ये वे जातियाँ हैं जो इनके रहने के आवासों में खोज करने पर अनुपस्थित पाई गई हैं। ये उपजातियाँ स्थानीय क्षेत्र, प्रदेश, देश, महाद्वीप, या पुरी पृथ्वी से लुप्त हो गई हैं। एशियाई चीता और गुलाबी सर वाली बत्तख एवं डोडो पंक्षी इसके अच्छी उदाहरण हैं।

संकटग्रस्त वन एवं वन्य जीवों, पर्यावरण तथा प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के लिए अन्य कई अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय संस्थान भी कार्यक्रम चला रही हैं। इनमें वर्ल्ड वाइल्ड फंड फॉर नेचर (WWF) विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण हैं।

भारत में वन एवं पर्यावरण मंत्रालय (Ministry of Forests and Environment) द्वारा वन एवं वन्य जीवों के संरक्षण के अनेक कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं।

वन्य जीवों को उनके प्राकृतिक आवास में संरक्षित करने का प्रयास सफल हो रहा है। इसे इन सीटू (in Situ) प्रयास कहते हैं। इसके अर्न्तगत विस्तृत भूखंड को संरक्षित क्षेत्र घोषित किया जाता है। इसी प्रकार इन्हें संकट से बचाने के लिए कृत्रिम आवासीय संरक्षण का विकास किया जाता है, इसे एक्स सीटू (Ex-Situ) कहते हैं। एक्स सीटू के प्रयास से जिन प्रजातियों के विलुप्त होने का खतरा है उनहें संग्रहित किया जाता है।

वन्य प्राणीयों के संरक्षण के लिए संरक्षित क्षेत्रों में (i) राष्ट्रीय उद्यान, (ii) विहार या अभ्यारण्य तथा (iii) जैवमंडल सम्मिलित हैं।

ABOIEL SOLUTIONS ABSOL PATNA

(i) राष्ट्रीय उद्यान (National Park) : ऐसे पार्कों का उद्देश्य वन्य प्राणियों के प्राकृतिक आवास में वृद्धि एवं प्रजनन की परिस्थितियों को तैयार करना है। इस उद्यान में बाहरी हस्ताक्षेप वर्जित होता है, जैसे कृषि कार्य, वन उत्पादों को एकत्र करना, पशु चारण तथा निर्माण कार्य। हमारे देश में राष्ट्रीय उद्यान की संख्या 85 है। प्रमुख राष्ट्रीय उद्यान एवं अभ्यारण्य को तालिका सं० 2 में दर्शाया गया है।

चित्र-7

(ii) विहार क्षेत्र या अभ्यारण्य (Sanctuary) : यह एक ऐसा सुरक्षित क्षेत्र होता है जहाँ वन्य जीव सुरक्षित ढंग से रहते हैं। यह निजी सम्पत्ति हो सकती है। इस क्षेत्र में कृषि, वन उत्पाद को एकत्र करने, मछली पकड़ने आदि की सीमित छूट होती है। वन्य जीवों के स्वाभाविक जैविक क्रियाएँ, जैसे घोंसला बनाना, जोड़ा बनाना, अंडे या बच्चे सेवना आदि पर बाधा पहुँचाने पर मालिकाना अधिकार को सीमित किया जा सकता है। भारत में इनकी संख्या 448 है। बिहार में बेगूसराय का काँवर झील और दरभंगा का कुशेश्वर इसके लिए चिह्नित किया गया है।

(iii) जैवमण्डल (Biosphere Reserves) : यह वह क्षेत्र है जहाँ प्राथमिकता के आधार पर जैव-विविधता के संरक्षण के कार्यक्रम चलाए जाते हैं। इन क्षेत्रों में जैव विविधता के अनुवांशिकी विविधता के रूप में संरक्षित कार्यक्रम चलाया जाता है। विश्व के 65 देशों में करीब 243 सुरक्षित जैवमंडल क्षेत्र हैं। भारत में इनकी संख्या 14 है।

तालिका संख्या - 2

भारत में राज्यानुसार प्रमुख राष्ट्रीय उद्यान तथा अभ्यारण्यों

राज्य	राष्ट्रीय उद्यान एवं अभ्यारण्य
मध्य प्रदेश	बांधवगढ़ राष्ट्रीय उद्यान (उमरिया) फासिल राष्ट्रीय उद्यान (मण्डला) कान्हा राष्ट्रीय उद्यान (मण्डला और बालाघाट) माधव राष्ट्रीय उद्यान (शिवपुरी) पन्ना राष्ट्रीय उद्यान (पन्ना/छतरपुर) पेंच राष्ट्रीय उद्यान (होशंगाबाद) सतपुड़ा राष्ट्रीय उद्यान (भोपाल) संजय डुबरी राष्ट्रीय उद्यान (सीधी)
कर्नाटक	गाँधी सागर अभयारण्य (मन्दसौर) बान्दीपुर राष्ट्रीय उद्यान भद्रा अभयारण्य (चिकमंगलूर) डण्डेली वन्य जीव अभयारण्य (दक्षिणी कन्नड़) शारावती वन्य जीव अभयारण्य (शिवामोग्गा)
राजस्थान	रणथम्भौर राष्ट्रीय उद्यान (सवाई माधोपुर) घना पक्षी विहार (भरतपुर) दर्रात अभयारण्य (कोटा) सरिस्का वन्य जीव अभयारण्य (अलवर) डेसर्ज अभयारण्य (जैसलमेर, बाडमेर)
आन्ध्र प्रदेश	काबला वन्य जीव अभयारण्य (आदिलाबाद) किन्नरसानी वन्य जीव अभयारण्य मालापट्टी पक्षी विहार (नैल्लोर)
केरल	परम्बिकुलम वन्य जीव अभयारण्य (पालघाट) पेरियार राष्ट्रीय उद्यान विनायड वन्य जीव अभ्यारण्य

उत्तराखण्ड	कार्बेट राष्ट्रीय उद्यान (नैनीताल) नन्दा देवी राष्ट्रीय उद्यान (चमोली) केदारनाथ अभयारण्य (चमोली) चीला अभयारण्य (गढ़वाल)
उत्तर प्रदेश	दुधवा राष्ट्रीय उद्यान (लखीमपुर खीरी) चन्द्रप्रभा अभयारण्य (वाराणसी)
असम	काजीरंगा राष्ट्रीय उद्यान (शिवसागर, नौगाँव) मानस वन्य जीव अभयारण्य (ग्वालपाड़ा) सोनाईरूपा वन्य जीव अभयारण्य (दरांग)
झारखण्ड	हजारीबाग वन्य जीव अभयारण्य पलामू वन्य जीव, अभयारण्य (पलामू) डाल्मा वन्य जीव अभयारण्य
तमिलनाडु	मुदुमलाई वन्य जीव अभयारण्य अन्नामलाई बाघ अभयारण्य गुण्डी राष्ट्रीय उद्यान (चेन्नई)
महाराष्ट्र	बोरीवली राष्ट्रीय उद्यान (मुम्बई) टोडोबा राष्ट्रीय उद्यान (चन्द्रपुर) डाकना अभयारण्य (अमरावती)
गुजरात	गिरि राष्ट्रीय उद्यान (जूनागढ़) बल्वाडर राष्ट्रीय उद्यान (भावनगर)
हिमाचल प्रदेश	रोहिला राष्ट्रीय उद्यान (कुल्लू) शिकारी देवी वन्य जीवन अभयारण्य (मण्डी)
पश्चिम बंगाल	जलदापारा वन्य जीव अभयारण्य (जलपाइगुड़ी) सुन्दरवन टाइगर रिजर्व (चौबीस परगना)
अरूणाचल प्रदेश	अरूणचल प्रदेश वन्य जीवन अभयारण्य (कामेंग) जन्दफा वन्य जीव अभयारण्य (तिरप)
उड़ीसा	सिमिलीपाल राष्ट्रीय उद्यान (मयूरगंज) चिल्का अभयारण्य (पूरी)

छत्तीसगढ़	इन्द्रावती राष्ट्रीय उद्यान (बस्तर) कांकेर राष्ट्रीय डद्यान (कांकेर) कुटरू उद्यान (बस्तर) उदयन्ती अभयारण्य (रायपुर) तमोर पिंगला राष्ट्रीय उद्यान (सरगुजा)
जम्मु-कश्मीर	दिनगाँव राष्ट्रीय उद्यान (श्रीनगर)
सिक्किम	कंचनजंगा राष्ट्रीय उद्यान
मिजोरम	डम्पा वन्य जीव अभयारण्य (आइजोल)
नागालैण्ड	इंटेंगी वन्य जीव अभयारण्य (कोहिमा)

चित्र

भारत सरकार के पर्यावरण एवं वन मंत्रालय के वार्षिक रिपोर्ट 2004-05 के अनुसार राष्ट्रीय उद्यान, विहार (अभयारण्यों) एवं जैवमंडलों की सूची तालिका-2 में प्रमुख राष्ट्रीय उद्यानों, विहारों एवं जैवमंडल क्षेत्र को दर्शाया गया है।

प्रजनन केन्द्र : प्रतिकूल परिस्थितियों में जीवों के प्रजनन दर में कमी आती है। ऐसी कई प्रजातियाँ हैं जिनकी प्रजनन दर कम होने के कारण संकटग्रस्त सूची में शामिल हैं। इसलिए जीवों के लिए प्रजनन केन्द्र की सुविधा विकसित होनी चाहिए। हमारे देश में मध्य प्रदेश में पर्यावरण परिवर्तन के कारण घड़ियालों की संख्या में भारी कमी हो गई, इसलिए इनके संरक्षण के लिए मुरैना (मध्य प्रदेश) में एक घड़ियाल प्रजनन केन्द्र स्थापित किया गया है। इसी प्रकार उड़ीसा के नन्दनकानन में उजले बाघ का प्रजनन केन्द्र स्थापित किया गया है।

शिकार पर रोक : वन्य प्राणियों के ह्रास का एक प्रमुख कारण इनका शिकार और इन्हें विभिन्न उद्देश्यों के लिए फंसाना है। इनका आर्थिक महत्त्व होने के कारण इनका दोहन होता है। यद्यपि फंसाना, शिकार करना, व्यापार करना कानूनी रूप से वर्जित है, किन्तु स्थानीय राज्य एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर इनकी काला बजारी एवं तस्करी हो रही है। जिसके कारण वन्य जीव का तेजी से दोहन हो रहा है। इसपर सरकार द्वारा सख्त कानूनी कार्रवाई भी की जा रही है। स्वयं सेवी संस्थाओं को भी आगे लाया जा रहा है और स्थानीय जनता में जागरूकता लाने की भी जरूरत है। बिहार के दरभंगा जिला का कुशेश्वर स्थान अभयारण्य (पक्षी विहार क्षेत्र) एक अच्छा उदाहरण है, जहाँ प्रवासी पक्षियों के शिकार एवं व्यापार पर रोकथाम के लिए स्थानीय नागरिकों के सहयोग से जन-जागरण के कार्यक्रम चलाए गए हैं। जिला प्रशासन के सहयोग से स्थानीय यूनेस्को क्लब द्वारा पक्षियों के शिकार पर प्रतिबंध लगाया गया है, जिसके अच्छे परिणाम प्राप्त हुए हैं। जिला प्रशासन द्वारा इसके लिए यहाँ एक वाच टावर (Watch Tower) का निर्माण कराया गया है।

जैव अपहरण की समस्या (Bio Piracy Problem) : यह आधुनिक अनुवंशिक इंजिनियरिंग एवं जैव तकनीकी का प्रतिफल (output) है। यह केवल वन्य प्राणियों के लिए गम्भीर समस्या नहीं है वरन सम्पूर्ण मानव समाज के लिए एक बड़ी समस्या

जैव अपहरण क्या है ?

प्रकृतिजनित तथा करोड़ों वर्षों के विकास की क्रिया में स्थापित अनुवांशिक गुणों में हेराफेरी को जैव अपहरण (Bio Piracy) कहते हैं।

बनती जा रही है। विभिन्न प्रकार के जीवों और वनस्पतियों के अनुवांशिक गुणों का पता लगाकर दूसरे जीवों में एवं पौधों में प्रत्यारोपण के द्वारा अन्य प्रकार के जीव एवं पौधा विकसित किया जाता है, इस कार्य के लिए विभिन्न देशों से जैव अपहरण होता है यानी अनुवांशिक गुणों की हेराफेरी की जाती है।

विकासशील देशों की जैव संपदा का विकसित देशों द्वारा अपनायी गयी Bio Piracy के कई उदाहरण देखने में आये हैं। उपयोगी जर्म प्लाज्म (Germ Plasm) की पहचान तथा उसमें आवश्यक परिवर्तन एवं प्रतिस्थापन कर ऐसा सम्भव है। अमेरिका में उगाई जाने वाली धान की एक प्रजाती का जर्म प्लाज्म, भारत के बासमती चावल के जर्म प्लाज्म के समान है।

पश्चिमी अफ्रीका में पाये जाने वाला पन्टडिपलान्ड्रा ब्राजिएनी ब्रैजीन (Pendiplandra brazzeane Brazzein) नाम का पौधा इसी प्रभाव में आ गया है, इस पौधे में पाये जाने वाले एक प्रकार के प्रोटीन की मिठास चीनी से 2000 गुना अधिक होती है। इसमें कैलोरी भी कम होती है अमेरिका द्वारा मिठास उत्पन्न करने वाले जीन की पहचान कर ली गई है। इस जीन को मक्का के पौधे में प्रतिस्थापित कर मकई के पौधा से चीनी से भी अधिक मिठास तथा कम कैलोरी वाला जैविक उत्पाद प्राप्त करने की दिशा में शोध किये जा रहे हैं। आप समझ सकते हैं कि गन्ने से चीनी का उत्पादन तथा निर्यात करने वाले देशों के लिए यह जैव अपहरण एक प्रकार की चुनौती है। इसके लिए अब कई राष्ट्रों द्वारा कठोर कदम उठाए जा रहे हैं। और हॉट स्पॉट (Hot Spot) चिह्नित कर जैव सम्पदा पर पाबंदी लगाई जा रही है।

हॉट स्पाट्स (Hot Spots) : नॉर्मेन मायर्स (Normen Mayers) ने 1988 में इन सेटू संरक्षण को प्राथमिकता के आधार पर हॉट स्पाट्स के पहचान पर जोर दिया।

"The hot spots are the richest and the most threatened reservoir of plant and animal life on the earth".

हॉट स्पॉट्स के निर्धारण के लिए मुख्य शर्तें हैं–

(i) देशज प्रजातियों की संख्या का निर्धारण–ऐसी प्रजातियां जो अन्य और कहीं नहीं पायी जाती हैं।

(ii) अधिवास पर अतिक्रमण की सीमा निर्धारित करना।

बाघ परियोजना (Project Tiger) :

वन्य जीवन सरंचना में बाघ (टाइगर) एक महत्वपूर्ण जंगली जाति है। 1973 में अधिकारियों ने पाया कि देश में 20वीं शताब्दी के आरंभ में बाघों की संख्या अनुमानित संख्या 5500 से घटकर मात्र 1827 रह गई है। बाघों को मारकर उनको व्यापर के लिए चोरी करना, आवासीय स्थलों का सिकुड़ना, भोजन के लिए आवश्यक जंगली उपजातियों की संख्या कम होना और जनसंख्या में वृद्धि बाघों की घटती संख्या के मुख्य कारण हैं। बाघों के खाल का व्यापार और इनकी हड्डियों का एशियाई देशों में परंपरागत औषधियों में प्रयोग के कारण यह जाति विलुप्त होने के कगार पर पहुँच गई है। चूँकि भारत और नेपाल दुनिया की दो तिहाई बाघों को आवास उपलब्ध कराते हैं, अतः ये देश ही शिकार, चोरी और गैर-कानूनी व्यापार करने वालों के मुख्य निशाने पर हैं।

क्या आप जानते हैं?
कि कैमरून के बोरोरो जनजाति के लोग स्वयं शिकार करने के बदले शेरों द्वारा किए गए शिकार पर धावा बोलते हैं इस से शेरों की संख्या में कमी आती है। इस प्रकार के शिकर को 'क्लेप्टोपैरासाईटिज्म' कहते हैं।

बाघ परियोजना (Project Tiger) विश्व की बेहतरीन वन्य जीव परियोजनाओं में से एक है और इसकी शुरूआत 1973 में हुई। शुरू में इसमें बहुत सफलता प्राप्त हुई क्योंकि बाघों की संख्या बढ़कर 1985 में 4002 और 1989 में 4334 हो गयी। परन्तु 1993 में इसकी संख्या घटकर 3600 तक पहुँच गई भारत में 37,761 वर्ग किमी० पर फैले हुए 27 बाघ रिजर्व हैं। बाघ संरक्षण मात्र एक संकटग्रस्त जाति को बचाने का प्रयास नहीं है, अपितु इसका उद्देश्य बहुत बड़े आकार के जैव जाति को भी बचाना है। उत्तरांचल में कॉरबेट राष्ट्रीय उद्यान, पश्चिम बंगाल में सुन्दरवन राष्ट्रीय उद्यान, मध्य प्रदेश में बांध गढ़ राष्ट्रीय उद्यान, राजस्थान में सारिस्का वन्य जीव पशुविहार, असम में मानस बाघ रिजर्व और केरल में पेरियार बाघ रिजर्व, भारत में बाघ संरक्षण परियोजना के उदाहरण हैं।

ABSOL SOLUTIONS PATNA

समुदाय और वन संरक्षण :

भारत के कुछ क्षेत्रों में स्थानीय समुदाय सरकारी अधिकारियों के साथ मिलकर वन्य जीवों के आवास स्थलों के संरक्षण में जुटे हैं क्योंकि ये वन और वनस्पतियों से दीर्घकाल से इनकी आवश्यकताओं की पूर्ति हो रही है। सरिस्का बाघ रिजर्व में राजस्थान के गाँवों के लोग वन्य जीव संरक्षण अधिनियम के तहत वहां से खनन कार्य बन्द करवाने के लिए संघर्षरत हैं। कई क्षेत्रों में तो लोग स्वयं वन्य जीव आवासों की रक्षा कर रहे हैं। राजस्थान के अलवर जिले में 5 गाँवों के लोगों ने तो 1,200 हेक्टेयर वन भूमि 'भैरोंदेव डाकव' विहार चोरी' घोषित कर दी जिसके अपने ही नियम कानून हैं, जो शिकार वर्जित करते हैं तथा बाहरी लोगों की घुसपैठ से यहाँ के वन्य जीवन को बचाते हैं।

आदिवासी लोग अपनी आवश्यकताओं के लिए आस-पास के परिवेश पर निर्भर करते हैं। वह वन जीवों का आखेट, मछली पकड़ना, जंगली फल, कंद, बीज प्राप्त करना एवं सीमित मात्रा में कृषि साधन आदि से ही अपने भोजन की आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। लेकिन आदिवासी (जनजाति) को अपने क्षेत्र में पाये जाने वाले पेड़-पौधों तथा वन्य जीवों से भावनात्मक एवं आत्मीय लगाव होता है। अपने परिवेश में पाये जाने वाले संसाधनों के संरक्षण के प्रति ये अत्यंत सक्रिय तथा सचेत होते हैं। ये जंगली पौधों के बीज आदि के अंकुरण के मौसम में वन क्षेत्रों में नहीं जाते हैं और अपने पालतू पशुओं को भी जंगल में प्रवेश से रोकते हैं। प्रजनन काल में मादा वन पशुओं का शिकार नहीं करते हैं। वन संसाधनों का उपयोग चक्रीय पद्धति से करते हैं। वन के खास क्षेत्रों को सुरक्षित रख उसमें प्रवेश नहीं करते हैं। समय-समय पर आवश्यकतानुसार वृक्षारोपण तथा उनकी रक्षा करते हैं। इस प्रकार से जनजातीय क्षेत्रों के वन को स्वभाविक संरक्षण प्राप्त हो जाता है।

हिमालय में प्रसिद्ध चिपको आंदोलन कई क्षेत्रों में वन कटाई रोकने में ही सफल नहीं रहा बल्कि यह भी दिखाया की स्थानीय पौधों का प्रयोग करके सामुदायिक वनीकरण अभियान को सफल बनाया जा सकता है। पारंपरिक संरक्षण तरीकों को कृषकों में क्रमशः परिस्थैतिक के अनुरूप कृषि की जागृति आयी है। जैसे टेहरी में किसानों के बीच भूमि बचाओ आंदोलन ने दिखा दिया है कि रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग के बिना भी विविध फसल उत्पादन द्वारा आर्थिक रूप से लाभकारी कृषि संभव है।

चिपको आंदोलन (Chipko Movement) :

उत्तर प्रदेश टेहरी--गढ़वाल पर्वतीय जिले में सुन्दर लाल बहुगुणा के नेतृत्व में अनपढ़ जनजातियों द्वारा 1972 में यह आंदोलन प्रारम्भ हुआ था। इस आन्दोलन में स्थानीय लोग ठेकेदारों की कुलहाड़ी से हरे-भरे पौधों को काटते देख, उसे बचाने के लिए अपने आगोश में पौधा को घेर कर इसकी रक्षा करते थे। इसे कई देशों में स्वीकारा गया।

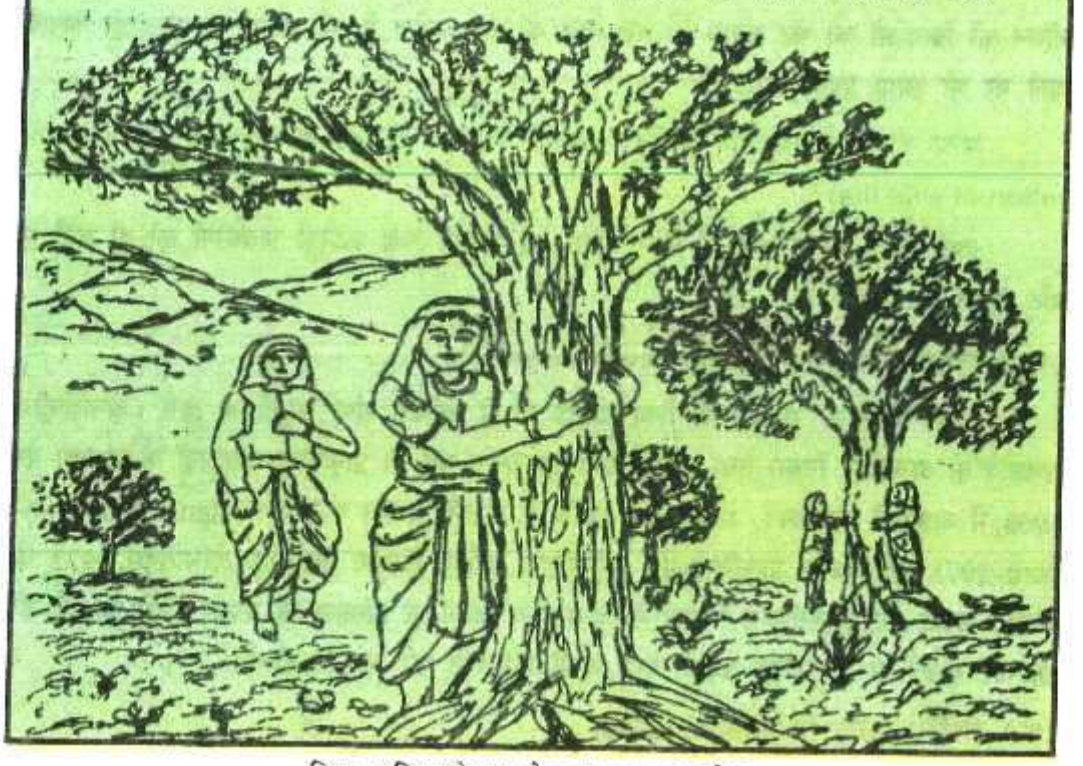

चित्र : चिपको आन्दोलन का एक दृश्य

भारत में संयुक्त वन प्रबंधन क्षरित वनों के प्रबंध और पुनर्निर्माण में स्थानीय समुदायों की भूमिका के महत्व को उजागर करते हैं। औपचारिक रूप में इन कार्यक्रमों की शुरूआत 1988 में हुई जब उड़ीसा राज्य में संयुक्त वन प्रबंधन का पहला प्रस्ताव पास किया। वन विभाग के अंतर्गत संयुक्त वन प्रबंध क्षरित वनों को बचाने के लिए कार्य करता है। और इसमें गाँव के स्तर पर संस्थाऐं बनाई जाती हैं जिसमें ग्रामीण और वन विभाग के अधिकारी संयुक्त रूप से कार्य करते हैं।

भारत में जैन एवं बौध धर्म के अनुयायी अहिंसा प्रेमी होते हैं ये धर्म 'अहिंसा परमो धर्म' पर आधारित हैं, जैन समुदाय के बीच सूक्ष्म जीव की भी हत्या वर्जित है। अत: वन एवं वन्य प्राणियों के संरक्षण में इनका काफी योगदान रहता है।

महात्मा बुद्ध ने 487 ई० पू० कहा था–"पेड़ एक विशेष असीमित दयालु और उदारपूर्ण जीवधारी हैं, जो अपने सतत् पोषण के लिए कोई मांग नहीं करता और दानशीलतापूर्वक अपने जीवन की क्रियाओं को भेंट करता है। यह सभी की रक्षा करता है और स्वयं पर कुल्हाड़ी चलाने वाले पर भी छाया प्रदान करता है।

वन्य जीवों के संरक्षण के लिए कानूनी प्रावधान (Legal provision for conservation of wild life) :

वन्य जीवों के संरक्षण के लिए बनाए गए नियमों तथा कानूनी प्रावधानों को दो वर्गों में बाँट सकते हैं, ये हैं–

(अ) अन्तर्राष्ट्रीय नियम (International Laws) :

वन्य जीवों के संरक्षण के लिए दो या दो से अधिक राष्ट्र समूहों के द्वारा (अन्तर्राष्ट्रीय समझौते के अन्तर्गत) नियम तथा कानूनी प्रावधान बनाए गए हैं। प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण पर 1968 में अफ्रीकी कनवेंशन, अन्तर्राष्ट्रीय महत्व के वेटलैड्स का कनवेंशन (Ramsar Convention) 1971 तथा विश्व प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक धरोहर संरक्षण एवं रक्षा अधिनियम 1972 के अंतर्गत बनाए गए अन्तर्राष्ट्रीय नियमों के द्वारा वन्य जीवों के संरक्षण के प्रयास किये जा रहे हैं। इस पर सख्ती से अनुपालन करके वन्य जीवों की रक्षा की जा सकती है।

(ब) राष्ट्रीय कानून (National Laws) :

भारत विश्व के उन देशों में से है जिसमें पर्यावरण तथा वन्य जीवन की रक्षा का प्रावधान संविधान में किया गया है। संविधान की धारा 21 के अन्तर्गत अनुच्छेद 47, 48, तथा 51ए (जी) वन्य जीवों तथा प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के निमय हैं।

वर्ष 1952 में भारतीय वन्य जीव बोर्ड (Indian wild life Board) के गठन के बाद वन्य जीवों के संरक्षण के प्रति सरकार का रूख गंभीर हुआ है। प्रान्तीय स्तर पर भी वन्य जीव बोर्ड का गठन किया गया है।

वन्य जीव सुरक्षा एक्ट 1972, नियमावली 1973 एवं संशोधित एक्ट 1991 के अंतर्गत पक्षियों तथा जानवरों के शिकार पर प्रतिबंध लगाया गया है।

वनों के संरक्षण के लिए बनाए गए वन संरक्षण एक्ट 1980 एवं नियमावली 1981 के भी कानूनी प्रावधान बड़े प्रभावशाली हैं। जैव विविधता अधिनियम 2002 के अन्तर्गत जैव विविधता के संरक्षण के लिए स्थानीय/प्रखण्ड/जिला और राज्य स्तर पर कमिटियां गठित करने का प्रावधान किया गया है। वन्य जीवों के संरक्षण को ही ध्यान में रख कर प्रत्येक राज्य से कहा गया है कि वे राज्य स्तरीय जानवर और पंक्षी की घोषण करें। राष्ट्रीय स्तर पर बाघ राष्ट्रीय जानवर और मयूर राष्ट्रय पंक्षी घोषित किया गया है।

वन्यजीव एवं जैव विविधता की उपयोगिता :

प्राकृतिक अधिवासीय वातावरण में विकसित होने वाले पौधों और जंतुओं को वन्य जीव (Wild life) कहते हैं। इस प्रकार 'पादप' (Flora) और 'जंतु' (Fauna) वन्य जीव के दो भाग हैं और ये जैवमंडल के अभिन्न अंग हैं। यह हमारी धरा पर अमूल्य धरोहर हैं। वन्य जीव सदियों से हमारे सांस्कृतिक एवं आर्थिक क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इनमें हमें भोजन, वस्त्र के लिए रेशे, खालें, आवास आदि सामग्री एवं अन्य उत्पादन प्राप्त होते हैं। इनकी चहक और महक हमारे जीवन में स्फूर्ति प्रदान करते हैं। पारिस्थिकी के लिए श्रृंगार के समान हैं। भारत में इन्हें सदैव आदर भाव एवं पूज्य समझा गया। मनिषियों के लिए प्रेरणा का स्रोत तो सैलानियों के लिए आकर्षण का विषय रहा है।

पादप (Flora) :

हमारे देश की जलवायु विषम है, वस्तुतः संसार में जितने भी प्रकार की जलवायु है, वह सभी जलवायु यहाँ मिलती है, यही कारण है कि हमारे देश में अनेक प्रकार की वनस्पतियाँ पायी जाती हैं। हम इन्हें मोटे तौर पर आठ वनस्पतिक क्षेत्र (Botanical Region) में बांट सकते हैं।

1. पश्चिमी हिमालय वनस्पतिक क्षेत्र : इस क्षेत्र का विस्तार कश्मीर से कुमाऊँ तक है। यहाँ चीड़, देवदार और कोणधारी वृक्ष का फैलाव है, ऊँचाई के साथ-साथ वृक्षों की प्रजातियों में भी परिवर्तन देखने को मिलता है, अधिक ऊँचे क्षेत्रों (4750 मी०) में अल्पाईन वनों का विस्तार है।

ABOIEL SOLUTIONS ABSOL PATNA

2. **पूर्वी हिमालय वनस्पतिक क्षेत्र :** इस क्षेत्र में ओक, छोटी बेंत तथा फूलों वाले सदाबहार वृक्ष मिलते हैं।

3. **असम वनस्पतिक क्षेत्र :** यह ब्रह्मपुत्र और सुरमाघाटी के बीच का क्षेत्र है, यहाँ मुख्य रूप से सदाबहार वन मिलते हैं सदाबहार वनों के बीच-बीच में घने बांसों एवं लम्बी घासों के झुरमुट मिलते हैं।

4. **सिन्धु मैदान वनस्पतिक क्षेत्र :** इस क्षेत्र में पंजाब, पश्चिमी राजस्थान और उत्तरी गुजरात के मैदान को शामिल किया गया है। बबूल, नागफनी, खेजरी, आक आदि यहाँ के मुख्य पौधे हैं।

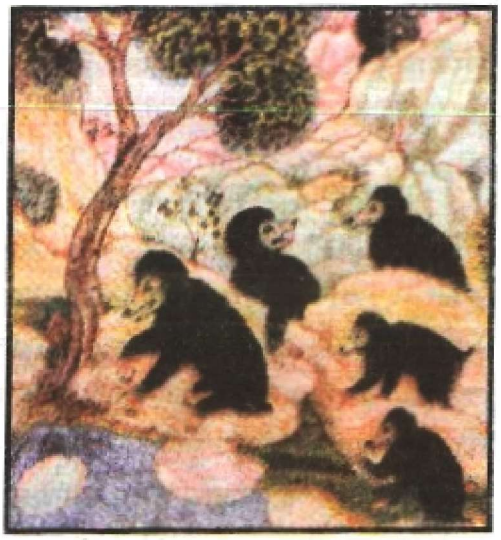

चित्र-8

5. **गंगा की मैदानी वनस्पतिक क्षेत्र :** अरावली से बंगाल और उड़ीसा के बीच के क्षेत्र इसके अन्तर्गत रखा गया है। यह क्षेत्र कृषि प्रधान क्षेत्र है इसलिए यहाँ वन बहुत कम विस्तृत है जहाँ-तहाँ बांस साल, खैर, तेन्दू के वृक्ष पाए जाते हैं।

6. **दक्षिण का पठारी वनस्पतिक क्षेत्र :** इसमें पूरा दक्षिण का पठारी क्षेत्र सम्मिलित किया गया है। यहाँ पतझड़ वाले वृक्ष पाए जाते हैं इसके अतिरिक्त विभिन्न प्रकार की जंगली झाड़ियाँ देखने को मिलती हैं।

7. **मालाबार वनस्पतिक क्षेत्र :** इसके अंतर्गत पश्चिमी तटीय क्षेत्र को रखा गया है। यहाँ पर गर्म मसाले, सुपारी, नारियल, रबर के वृक्ष के अलावा काजू, चाय एवं कॉफी के वृक्ष पाए जाते हैं।

8. **अंडमान वनस्पतिक क्षेत्र :** यहाँ पर सदाबहार, अर्द्ध सदाबहार, एवं समुद्रीतटीय जंगलों की प्रमुखता है।

भारतीय वनस्पतिक सर्वेक्षण (Botanical Survey of India, BSI) के अनुसार यहाँ 47,000 पेड़-पौधों की प्रजातियाँ हैं जिसमें 15,000 प्रजातियां वाहिनी वनस्पति (Vascular Plant) के अन्तर्गत आते हैं। इनमें 35% प्रजातियां देशी (Endemic) हैं, जो विश्व में और कहीं नहीं पायी जाती है।

जन्तु (Fauna) : भारतीय प्राणी सर्वेक्षण, कोलकाता (Zoological Survey of India,ZSI) के सर्वेक्षण के अनुसार हमारे यहाँ 89,451 जीव-जन्तुओं की प्रजातियां पायी जाती हैं, जिनको निम्नांकित वर्गों में रखा गया है।

अद्यजीव (प्रोटिस्टा)	2577 प्रजातियां
आथ्रोपोडा	68,389 प्रजातियां
मोलस्क	5000 प्रजातियां
अन्य अकशेरूकी	8,329 प्रजातियां
प्रोटोकॉर्डेटा	119 प्रजातियां
मछलियां	2,546 प्रजातियां
अभयचर	209 प्रजातियां
सरीसृप	456 प्रजातियां
पक्षी	1,232 प्रजातियां
स्तनपायी	390 प्रजातियां

इनमें कई लुप्त होने के कगार पर हैं। इनके संरक्षण के लिए सरकार ने कई कदम उठाऐ हैं। इनके लिए 89 उद्यान तथा 400 वन्य प्राणी उद्यान का विकास प्रमुख है। इसके अंतर्गत सम्मिलित रूप से 1.56 लाख किलोमीटर क्षेत्रफल है।

जैव-विविधता की उपयोगिता के ज्ञान के पूर्व आप यह जान लें कि **जैव-विविधता (Biodiversity)** क्या है?

आपने पटना का संजय गांधी जैविक उद्यान का भ्रमण किया होगा। वहाँ एक ओर धनवन्तरी पार्क में छोटे-छोटे विभिन्न प्रकार के औषधीय पौधे देखा होगा, तो दूसरी ओर बड़े-बड़े विभिन्न प्रकार के वृक्ष इसी वनों में उछलते कुदते बंदरों का आवास, तो कहीं सिंह, गेंडा और मगर को देखकर आनंदित होए होंगे, छोटी-बड़ी सुनदर पक्षियों की चह-चहाहट सुनकर भाव विभोर होए होंगे, तो कहीं रेंगने वाले जीव साँप दिखाई पड़ा होगा, वास्तव में स्थानीय स्तर पर यह जैविक उद्यान जैव-विविधता का ही प्रतिनिधित्व करता है। यह भूमंडल जो हम सबों का आवास है, सूक्ष्म जीवाणों और बैक्टेरिया से लेकर वट-वृक्ष हाथी और ब्लूव्हेल तक करोड़ों जीव धारी का अधिवास है, सही अर्थों में यह पृथ्वी जैव विविधता का भंडार है।

विगत 250 वर्षों से जीव वैज्ञानिक जीवों एवं पादपों की पहचान एवं नामों का पता लगाने का प्रयास कर रहे हैं, हमारे वैज्ञानिकों ने तो कई हजार वर्ष पूर्व में ही जन्तुओं एवं पेड़-पौधों पर शोध करके इसकी सूची तैयार कर नाम एवं प्रजातियों की खोज की थी। प्रथम शताब्दी में आयुर्वेद के जनक चरक ने चरक संहिता में 200 प्रकार के पशुओं और 340 प्रकार के पौधों का उल्लेख किया है।

अठारहवीं शताब्दी में स्वीडन के वैज्ञानिक कैरोल्स लिनाईसं ने लगभग 5900 प्रकार के पौधों तथा 4200 प्रकार के पशुओं की पहचान की थी। अब तक 17 लाख प्रजातियों का नामाकरण किया जा चुका है, इनमें दस लाख से अधिक पशु हैं और 7 लाख पौधों की प्रजातियां हैं। एक अनुमान के अनुसार विश्व में 50 लाख से अधिक प्रजातियां हैं। कुल प्रजातियों में से आधा से अधिक प्रजातियां विश्व के अज्ञात उष्ण कटीबंध वर्षा वनों में पायी जाती हैं, जबकि वर्षा वन विश्व के स्थलीय भू-भाग का 8 प्रतिशत से भी कम क्षेत्रफल है।

हमारा देश जैव-विविधता के संदर्भ में विश्व के सर्वाधिक समृद्ध देशों में से एक है, इसकी गणना विश्व के 12 विशाल जैविक-विविधता वाले देशों में की जाती है, यहाँ विश्व की सारी जैव उप जातियों का आठ प्रतिशत संख्या (लगभग 16 लाख) पाई जाती है।

क्या आप जानते हैं ?

- विश्व की एक लाख कीट पतंगों की जातियों में से 60 हजार जातियां भारत में हैं।
- 41 सौ मछलियों की प्रजातियों में से भारत में 1693 प्रजातियां हैं।
- विश्व की 9 हजार पक्षियों की जातियों में से लगभग 12 सौ भारत में पाई जाती है। इसी प्रकार 4 हजार स्तनपाई जीवों का 10% भारत में है।
- पादप बहुल देशों में भारत का दसवां स्थान है।
- भारत एक महत्वपूर्ण वैवोलिवियन सेंटर ऑफ डाईवरसिटी (Vavilavion Centre of Dirversity) है, जहाँ 167 महत्वपूर्ण कृष्य पादप प्रजातियां (Cultivated plant species) है।
- चावल, गन्ना, जूट आम, नींबू, केला, बाजरा, ज्वार, फसलों का उद्भव भारत में हुआ।

जैव विविधता के संदर्भ में अभी भी हमारा ज्ञान बहुत कम है। इस भूमंडल पर पेड़-पोधे एवं जीव-जन्तु की जातियां-प्रजातियां, उपजातियां संख्या से कहीं अधिक होने की सम्भावनाएँ हैं, आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि प्रत्येक वर्ष 10,000 (मोटे तौरपर) नवीन प्रजातियां की उतपत्ती हो रही है।

क्या आप जानते हैं?

- हमें भूमंडल पर अधिवास करने वाले प्रजातियों का सही-सही पता नहीं है।
- एक अनुमान के अनुसार प्रजातियों की संख्या चार से सौ मिलियन तक पहुँच सकती है।
- विश्व में सबसे अधिक जातियां कीड़े-मकोड़े (Insects) और अतिसूक्ष्म पराजीवों की है, जिन्हें हम खुली आँखों से नहीं देख सकते हैं।

हमारा देश जैविक विविधता में समृद्ध देश है। सबसे समृद्ध जैव-विविधता वाला क्षेत्र पश्चिमी घाट और उत्तरी पूर्वी भारत है। इनमें क्रमश: भारत का 4% और 5.2% भौगोलिक क्षेत्रफल है, विश्व के 25 हॉट स्पॉट में इन्हें भी रखा गया है। इनमें असंख्य प्रकार के जैविक समूह रहते हैं। भारत में 33% पूष्पीय पौधे भारतीय मूल के हैं। इसी प्रकार 53% स्वच्छ जल मछली 60% एमफेबियन्स 30% रेंगनेवाली प्रजातियां और 10% स्तनपायी प्रजातियां भारतीय मूल (endemic) के हैं। पूर्वोत्तर भारत पश्चिमी घाट, उत्तर पश्चिम हिमालय और अंडमान निकोबार द्वीप समूह मुख्य रूप से देशज (endemic) क्षेत्र के रूप में प्रसिद्ध हैं। कुछ (Amphibian) पश्चिमी घाट में भारतीय मूल के हैं।

क्या आप जानते हैं?

- कम से कम 136 फसल प्रजातियां और 320 वन सम्बंधी प्रजातियां मूलत: भारतीय हैं।
- हमारे यहाँ बड़ी संख्या में घरेलू प्रजातियां हैं, इसकी सबसे अच्छी उदाहरण चावल है, जिसकी 50,000 से 60,000 किस्में भारत में पायी जाती है।

यूनेस्को के सहयोग से भारत में 14 जैवमण्डल आरक्षित क्षेत्र की स्थापना की गई है, यह क्षेत्र अगले पृष्ठ की तालिका में प्रदर्शित है।

तालिका–3

क्रम सं०	जैवमंडल रिजर्व क्षेत्र का नाम	कुल भौगोलिक क्षेत्र (वर्ग किमी)	स्थिति (राज्य)
1.	नीलगिरि	5,520	वायनाद, नगरहोल, बांदीपुर, मुदुमलाई, निलम्बूर, सायलेण्ट वैली और सिरूवली पहाड़ियाँ (तामिलनाडु, केरल, और कर्नाटक)
2.	नन्दा देवी	2,236.74	चमौली, पिथौरगढ़ और अल्मोड़ा जिलों का भाग (उत्तराखंड)
3.	नोकरेक	820	गारो पहाड़ियों का भाग (मेघालय)
4.	मानस	2,837,	कोकराझार, बोंगाईगाँव, बरपेटा, नलबाड़ी कामरूप व दारंग जिलों के हिस्से (असम)
5.	सुन्दरवन	9,630	गंगा–ब्रह्मपुत्र के डेल्टा और इसका भाग (पश्चिमी बंगाल)
6.	मन्नार की खाड़ी	10,500	भारत और श्रीलंका के बीच स्थित मन्नार की खाड़ी का भारतीय हिस्सा (तमिलनाडु)
7.	ग्रेट निकोबार	885	अंडमान निकोबार के सुदूर दक्षिणी द्वीप (अंडमान निकोबार द्वीप समूह)
8.	सिमिलीपाल	4,374	मयूरभंज जिले के भाग (उड़ीसा)
9.	डिब्रू साईकोबा	765	डिब्रूगढ़ और तिनसुकिया जिले के भाग (असम)
10.	दिहाँग–देबांग	5,111.5	अरूणाचल प्रदेश में सियांग और देबांग जिलों के भाग
11.	कंचनजंगा	2,619.92	उत्तर और पश्चिम सिक्किम के भाग
12.	पचमढ़ी	4,926.28	बेतूल, होशंगाबाद और छिंदवाड़ा जिलों के भाग (मध्य प्रदेश)
13.	अगस्थ्यमलाई	1,701	केरल में अगस्थ्यमलाई पहाड़ियां
14.	अचानकमार–अमरकंटक	3,835.51	मध्य प्रदेश में अनुपपुर और दिनदौरी जिलों के भाग और छत्तीसगढ़ में बिलासपुर जिले के भाग

स्रोत : वार्षिक रिर्पोट 2004-05 पर्यावरण एवं वन मंत्रालय, भारत सरकार।

ABDIEL SOLUTION ABSOL PATNA

चित्र-7

राष्ट्र के स्वस्थ जैव मंडल एवं जैविक उद्योग के लिए समृद्ध जैव-विविधता अनिवार्य है। जैव विविधता से हम-आप परोक्ष एवं अपरोक्ष लाभ उठाते हैं। जैव विविधता हमारे लिए भोजन, औषधियाँ, भैषज्य दवाईयों, रेशों, रबर और लकड़ियों का साधन है। कई सूक्ष्म जीवों का उपयोग बहुमूल्य उत्पाद तैयार करने के लिए उद्योगों में प्रयोग होता है। यह हमें मुफ्त में बहुत सारे पारिस्थैतिकीय सेवा प्रदान करता है, जैव विविधता की मुख्य उपयोगिताएँ निम्नलिखित हैं।

(i) आधुनिक कृषि तीन प्रकार से जैव विविधता का उपयोग करता है।

(क) नवीन फसल के साधन के रूप में।

ABSOLUTE SOLUTIONS PATNA

(ख) अच्छे प्रकार के नसल के लिए सामग्री के रूप में।

(ग) नये जैव विनाश, पीड़ानाशी के रूप में।

मानव के भोजन पूर्णत: जैविक संसार से प्राप्त होता है। कई हजार प्रजातियाँ खाद्य योग्य पौधों की हैं, किन्तु लगभग 85 प्रतिशत संसार का भोजन 20 से भी कम पौधे की प्रजातियों से खेती द्वारा उत्पन्न किया जाता है। शेष 15 प्रतिशत पशुओं से उत्पन्न किया जाता है। नई प्रजातियां (पौधे एवं जन्तु) की खोज बढ़ती जनसंख्या के भोजन के लिए सहायक होंगे।

विकसित पौधों एवं घरेलू जानवरों की कुशल नस्ल आधुनिक खेती की रीढ़ की हड्डी है। बहुत सारी विकसित प्रकार की फसलें और अन्य उपयोगी पौधे प्रजनन-क्रिया योजना के द्वारा विकसित किए गए हैं। जंगली प्रजातियों का अनुवांशिकी (Genes) का उपयोग नये गुणों के लिए होता है, जैसे रोग रोधी अथवा विकसित घरेलु प्रजातियों की उपज के लिए। उदाहरण के लिए एशिया में धान की खेती का चार प्रमुख रोगों से संरक्षण एक अकेला जंगली भारती चावल प्रजाति ओर्जिया निवारा (Orzya nivara) से कियाजाता है।

जैव विविधता का उपयोग बहुत सारे औषधीय उपयोग में होता है। बहुत सारे तत्व से रोग उपचार गुणों को पौधों से प्राप्त किया जाता है। जैसे मार्फीन (Marphine) का उपयोग दर्द निरोधक के लिए किया जाता है और इसे पापाव्हर सोनीफेरम (Papaver Sonniferem) से प्राप्त किया जाता है। क्यूनाईन (Quinine) मलेरिया के लिए उपयोगी है यह चिनचोना लेडजेनरियाना (Chinchona Ledgenriana) से प्राप्त होता है। टेक्सोल (Taxol) कैंसर रोधी औषधी है जो एक प्रकार के सदाबहार वृक्षों के छाल टैक्सस बेक्केटा एवं टी० ब्रव्हीफोलिया (Taxus baccota and T. brevifolia) से प्राप्त किया जाता है। अधिकतर परम्परागत दवाईयों का निर्माण पौधों से होता है। लगभग 25% भैषज्य दवाईयाँ केवल 120 पौधीय प्रजातियों से तैयार किया जाता है।

क्या आप जानते हैं?

- आयुर्वेदिक एवं यूनानी दवाईयाँ पादप जन्तु एवं खनिजों से तैयार की जाती है।
- आयुर्वेदिक जनक चरक ने हजारों वर्ष पूर्व पादप, जन्तु एवं खनिज का उपयोग रोग उपचार के रूप में किया था।
- आयुर्वेद भारतीय इलाज पद्धती है और विश्व की प्राचीन पद्धतियों में से एक है।

क्या आप दिसम्बर 1987 की एक सच्ची कहानी के बारे में जानते हैं? ट्रॉपीकल

बॉटनीकल गार्डेन एण्ड रिसर्च इंस्टीच्यूट (TBGRI) नामक संस्था की एक टीम केरल में पश्चिमी घाट के जैविकीय अभियान पर थी, इस टीम के कानी आदिवासियों के कुछ सदस्यों को मार्ग दर्शन के रूप में साथ में लिया। वैज्ञानिकों ने देखा कि यह लोग एक फल खा रहे थे जिससे उन्हें दुलर्भ मार्ग चलने के बावजूद काफी उर्जावान बना दिया। जब वैज्ञानिकों ने इसका भोग किया तो उन्हें भी अचानक उर्जा एवं शक्ति की अनुभूति हुई।

क्रियाकलाप

- एक पीपल या वर्गद के वृक्ष के पास अपने साथियों के साथ जाईएं और बैठ कर इसके गुणों, लाभों एवं उपयोगिताओं पर विचार कीजिए।
- वन एवं वन्य प्राणियों के संरक्षण सम्बंधी विषयों पर विद्यालय में एक संगोष्ठी का आयोजन कीजिए।
- अपने आस-पास लगे शीशम के वृक्ष के आर्थिक लाभ एवं औषधीय गुण के सम्बंध में लोगों को जागृत करें और यह भी बताऐं कि इसके बुरादे (चूर्ण) एवं पत्तियां किन-किन रोग के लिए उपयोगी है।

वैज्ञानिकों में इस फल के प्रति जिज्ञासा बढ़ी और मार्गदर्शक से जानकारी चाही किन्तु ये इनकार करते रहे, इसे वह केवल पावन और रहस्यमय फल बताते रहे और यह भी कहा कि यह फल हमलोगों के लिए है, वाह्य लोगों के लिए नहीं है। जब काफी आग्रह किया तो मार्गदर्शक ने इस पौधे को दिखाया जो इनके फल का साधन था और इसका नाम 'आरोग्यपाचा' बताया।

जब वैज्ञानिकों ने इसकी जानकारी प्राप्त करली तो इस पर शोध किया तो पाया कि यह तनाव रोधक है, और इसमें अन्य लाभकारी एवं गुणकारी सक्रिय तत्व हैं। 'आरोग्यपाचा एवं अन्य तीन औषधीय पौधों के मिश्रण से एक औषधी तैयार किया और उसका नाम 'जीवानी' दिया गया TBGRI ने इसे बनाने के लिए एक प्राईवेट कम्पनी आर्यावैद्य फार्मेसी (AVP) को दिया। इसके लिए 10,00,000/- रूपये पॅजियन शुल्क लिया और दो प्रतिशत रॉयलीटी तय हुई इस प्रकार कानी समुदाय ने इससे आधी रॉयलीटी प्राप्त कर अपने समुदाय के कल्याण हेतु एक ट्रस्ट स्थापित किया।

देखा आपने एक पौधे ने कितना कमाल किया।

अभ्यास प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न :

1. भारत में 2001 में कितने प्रतिशत भौगोलिक क्षेत्र में वन का विस्तार था?

   (क) 25 (ख) 19.27

   (ग) 20 (घ) 20.60

2. वन स्थिति रिपोर्ट के अनुसार भारत में वन का विस्तार है।

   (क) 20.60 प्रतिशत भौगोलिक क्षेत्र में (ख) 20.55 प्रतिशत भौगोलिक क्षेत्र में

   (ग) 20 प्रतिशत भौगोलिक क्षेत्र में (घ) इनमें से कोई नहीं।

3. बिहार में कितने प्रतिशत भौगोलिक क्षेत्र में वन का फैलाव है?

   (क) 15 (ख) 20

   (ग) 20 (घ) 7

4. पूर्वोत्तर राज्यों के 188 आदिवासी जिलों में देश के कुल क्षेत्र का कितना प्रतिशत वन है?

   (क) 75 (ख) 80.05

   (ग) 90.03 (घ) 60.11

5. किस राज्य में वन का सबसे अधिक विस्तार है ?

   (क) केरल (ख) कर्नाटक

   (ग) मध्य प्रदेश (घ) उत्तर प्रदेश

6. वन संरक्षण एवं प्रबंधन की दृष्टि से वनों को वर्गीकृत किया गया है–

   (क) 4 वर्गों में (ख) 3 वर्गों में

   (ग) 5 वर्गों में (घ) इनमें से कोई नहीं

7. 1951 से 1980 तक लगभग कितना वर्ग किलोमीटर वन क्षेत्र कृषि भूमि में परिवर्तित हुआ?

(क) 30,000 (ख) 26,200

(ग) 25,200 (घ) 35,500

8. संविधान की धारा 21 का संबंध है–

(क) वन्य जीवों तथा प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण

(ख) मृदा संरक्षण

(ग) जल संसाधन संरक्षण

(घ) खनिज सम्पदा संरक्षण

9. एक एन० जी० ओ० की वानिकी रिपोर्ट के अनुसार 1948 में विश्व में कितने हेक्टेयर भूमि पर वन का विस्तार था।

(क) 6 अरब हेक्टेयर (ख) 4 अरब हेक्टेयर

(ग) 8 अरब हेक्टेयर में (घ) 5 अरब हेक्टेयर में

10. प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण 1968 में कौन सा कनवेंशन हुआ था?

(क) अफ्रीकी कनवेंशन (ख) वेटलैंड्स कनवेंशन

(ग) विश्व आपदा कनवेंशन (घ) इनमें से कोई नहीं

11. इनमें कौन सा जीव है जो केवल भारत ही में पाया जाता है?

(क) घड़ियाल (ख) डॉलफिन

(ग) ह्वेल (घ) कछुआ

12. भारत का राष्ट्रीय पंक्षी है–

(क) कबूतर (ख) हंस

(ग) मयूर (घ) तोता

13. मैंग्रोव्स का सबसे अधिक विस्तार है–

(क) अण्डमान-निकोबार द्वीप समूह के तटीय भाग में

(ख) सुन्दरवन में

(ग) पश्चिमी तटीय प्रदेश में

(घ) पूर्वोत्तर राज्य में

14. टेक्सोल का उपयोग होता है–

(क) मलेरिया में (ख) एड्स में

(ग) कैंसर में (घ) टी०बी० के लिए

15. 'चरक' का सम्बंध किस देश से था?

(क) म्यांमार से (ख) श्रीलंका से

(ग) भारत से (घ) नेपाल से

लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. बिहार में वन सम्पदा की वर्तमान स्थिति का वर्णन कीजिए।
2. वन विनाश के मुख्य कारकों को लिखिये।
3. वन के पर्यावरणीय महत्व का वर्णन कीजिए।
4. वन्य-जीवों के ह्रास के चार प्रमुख कारकों का उल्लेख कीजिए।
5. वन और वन्य जीवों के संरक्षण में सहयोगी रीति रिवाजों का उल्लेख कीजिए।
6. चिपको आन्दोलन क्या है?
7. कैंसर रोग के उपचार में वन का क्या योगदान है?
8. दस लुप्त होने वाले पशु-पंक्षियों का नाम लिखिए।
9. वन्य-जीवों के ह्रास में प्रदूषण जनित समस्याओं पर अपना विचार स्पष्ट कीजिए।
10. भारत के दो प्रमुख जैवमंडल क्षेत्र का नाम, क्षेत्रफल एवं राज्यों का नाम बताऐं।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न :

1. वन एवं वन्य जीवों के महत्व का विस्तार से वर्णन कीजिए।
2. वृक्षों के घनत्व के आधार पर वनों का वर्गीकरण कीजिए और सभी वर्गों का वर्णन विस्तार से कीजिए।
3. जैव विविधता क्या है? यह मानव के लिए क्यों महत्वपूर्ण हैं? विस्तार से लिखिए।
4. विस्तार पूर्वक बतायें कि मानव-क्रियाऐं किस प्रकार प्राकृतिक वनस्पति और प्राणीजात के ह्रास के कारक हैं।
5. भारतीय जैवमंडल क्षेत्रों की चर्चा विस्तार से कीजिए।

(घ) खनिज संसाधन

खनिज संसाधन आधुनिक सभ्यता एवं संस्कृति के आधार स्तम्भ हैं। भारत में लगभग 100 से अधिक खनिज मिलते हैं तथा कुछ खनिजों के उत्पादन एवं भण्डार में यह विश्व के अग्रणी देशों में एक है। स्वतंत्रता के बाद खनिजों के सर्वेक्षण एवं विकास की ओर काफी ध्यान दिया गया है। जियोलॉजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया, (GSI) तेल एवं प्राकृतिक गैस आयोग एवं निजी क्षेत्र की कम्पनियाँ इस दिशा में महत्वपूर्ण कार्य कर रही हैं।

खनिज निश्चित अनुपात में रासायनिक एवं भौतिक विशिष्टताओं के साथ निर्मित एक प्राकृतिक पदार्थ है। दूसरे शब्दों में, खनिज निश्चित रासायनिक संयोजन एवं विशिष्ट आंतरिक परमाणविक संरचना वाले ठोस प्राकृतिक पदार्थ को कहा जाता है। हमारा स्थलमण्डल चट्टानों से बना है तथा चट्टान खनिजों के संयोग से बनी है। अभी तक लगभग 2000 से अधिक खनिजों की पहचान की जा चुकी हैं किन्तु 30 खनिज ही आर्थिक दृष्टि से विशिष्ट महत्व रखते हैं।

खनिजों के प्रकार :

खनिज सामान्यतः दो प्रकार के होते हैं :-

1. धात्विक खनिज : इन खनिजों में धातु होता है जैसे लौह अयस्क, तांबा, निकिल, मैंगनीज आदि। पुनः इसे दो भागों में विभक्त किया जा सकता है :-

(क) लौहयुक्त खनिज : जिन धात्विक खनिजों में लोहे का अंश अधिक पाया जाता है वे लौह युक्त खनिज कहलाते हैं, जैसे–लौह अयस्क, मैंगनीज, निकिल, टंगस्टन आदि।

(ख) अलौहयुक्त खनिज : जिन धात्विक खनिजों में लोहे का अंश न्यून होता है या नहीं होता है वे अलौहयुक्त खजिन कहलाते हें, जैसे–सोना, चांदी, शीशा, बॉक्साइट, टिन, ताँबा आदि।

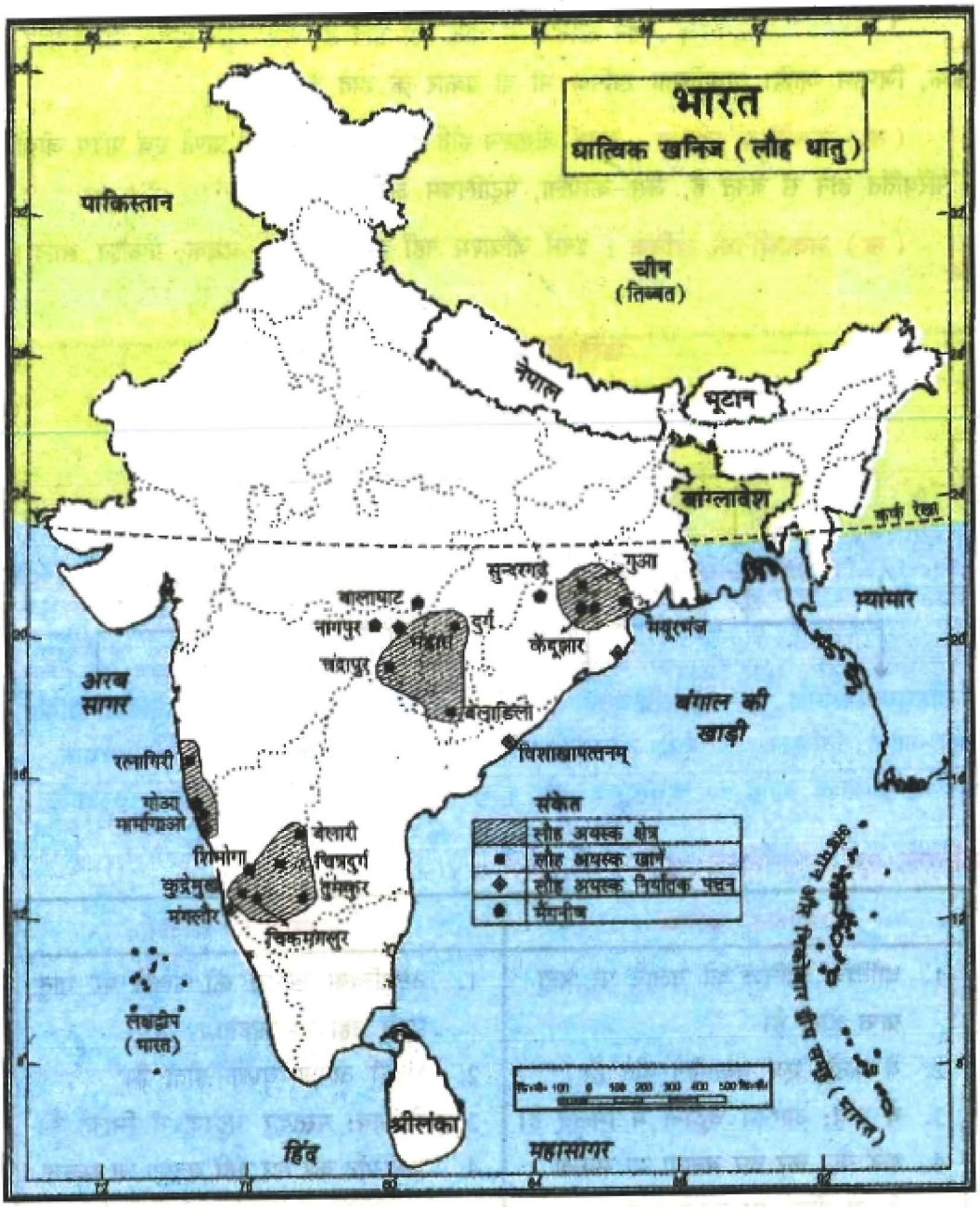

चित्र-1 (घ).1 : धात्विक खनिज (लौह धातु)

2. अधात्विक खनिज : इन खनिजों में धातु नहीं होते हैं, जैसे–चुना-पत्थर, डोलोमाइट, अभ्रक, जिप्सम आदि। अधात्विक खनिज भी दो प्रकार के होते हैं–

(क) कार्बनिक खनिज : इसमें जीवाश्म होते हैं। ये पृथ्वी में दबे प्राणी एवं पादप जीवों के परिवर्तित होने से बनते हैं, जैसे–कोयला, पेट्रोलियम आदि।

(ख) अकार्बनिक खनिज : इनमें जीवाश्म नहीं होते हैं, जैसे–अभ्रक, ग्रेफाइट आदि।

खनिजों का वर्गीकरण

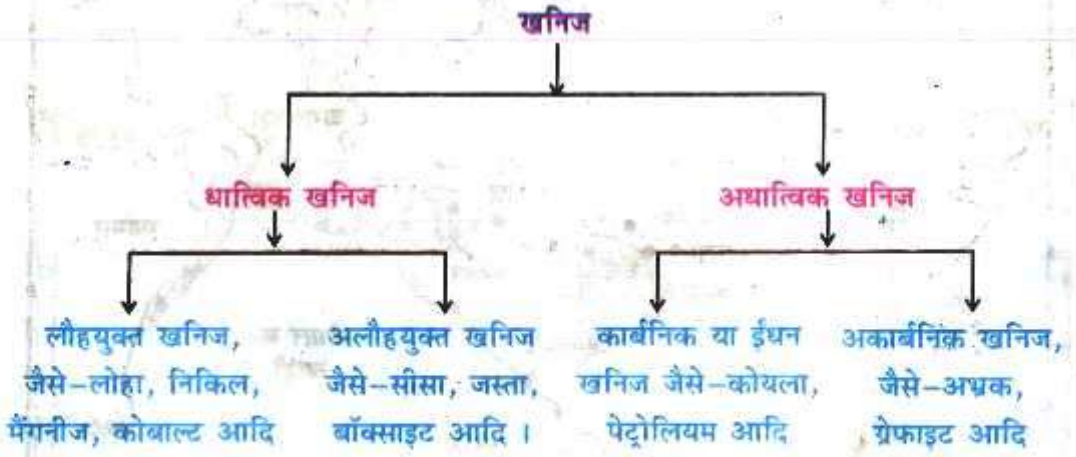

धात्विक एवं अधात्विक खनिजों में अंतर :

धात्विक खनिज	अधात्विक खनिज
1. धात्विक खनिज को गलाने पर धातु प्राप्त होता है।	1. अधात्विक खनिज को गलाने पर धातु प्राप्त नहीं हो सकता।
2. ये कठोर एवं चकमीले होते हैं।	2. इनकी अपनी चमक होती है।
3. ये प्रायः आग्नेय चट्टानों में मिलते हैं।	3. ये प्रायः परतदार चट्टानों में मिलते हैं।
4. इन्हें पीट कर तार बनाया जा सकता है। ये पीटने पर टूटता नहीं है।	4. इन्हें पीट कर तार नहीं बनाया जा सकता। ये पीटने पर चूर-चूर हो जाते हैं।

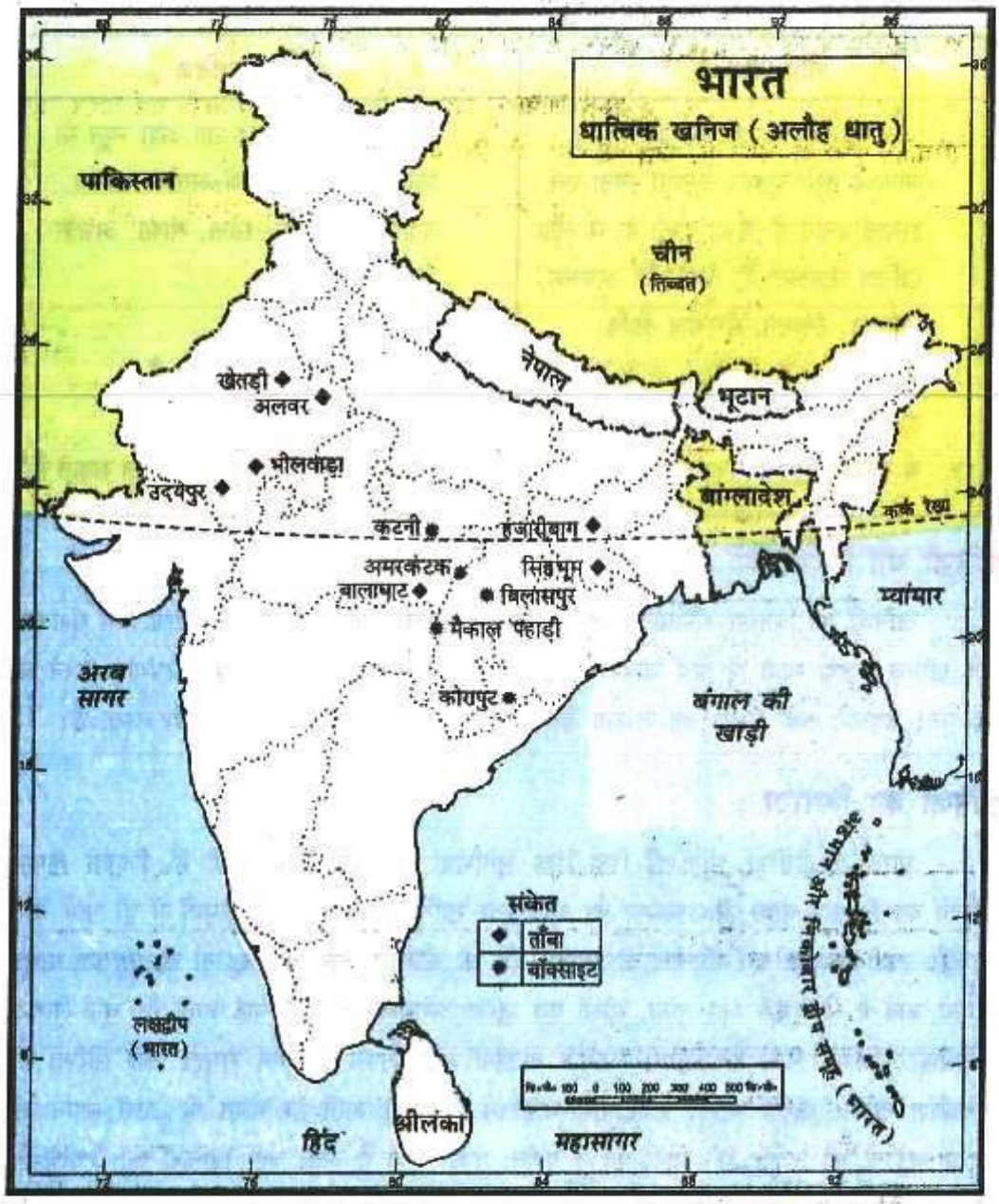

चित्र-1 (घ).2 : धात्विक खनिज (अलौह धातु)

ABDIEL SOLUTIONS ABSOL PATNA

लौह एवं अलौह खनिजों में अंतर :

लौह खनिज	अलौह खनिज
1. जिन खनिजों में लोहे का अंश पाया जाता है तथा उनका उपयोग लोहा एवं इस्पात बनाने में किया जाता है, वे लौह खनिज कहलाते हैं, जैसे लौह अयस्क, निकिल, टंगस्टन, मैंगनीज आदि	1. जिन खनिजों में लोहे का अंश न्यून या बिल्कुल नहीं होता वे अलौह खनिज कहलाते हैं, जैसे–सोना, सीसा, अभ्रक आदि ।
2. ये स्लेटी, धूसर, मटमैला आदि रंग के होते हैं।	2. ये अनेक रंग के हो सकते हैं
3. ये रवेदार चट्टानों में पाये जाते हैं।	3. ये सभी प्रकार के चट्टानों में मिल सकते हैं।

खनिजों की विशेषताएँ :

खनिजों का वितरण असमान होता है। अधिक गुणवत्ता वाले खनिज कम तथा कम गुणवत्ता वाले खनिज ज्यादा मात्रा में पाये जाते हैं। खनिज समाप्य संसाधन हैं। एक बार उपयोग करने के बाद पुनः उपयोग नहीं किया जा सकता है। अतः इसके संरक्षण की परम आवश्यकता है।

खनिजों का वितरण :

भारत के विभिन्न भागों में भिन्न-भिन्न भूगर्भिक संरचनाएँ पायी जाती हैं, जिनके कारण खनिजों का वितरण बहुत ही असमान है। अधिकतर खनिज प्राचीन चट्टान समूहों में ही पाये जाते हैं। जैसे–लौह-अयस्क एवं मैंगनीज के भण्डार देश के कैम्ब्रियन पूर्व की चट्टानों के धारवाड़ समूह में पाये जाते हैं तो दूसरी ओर तांबा, सीसा एवं जस्ता अरावली श्रेणी में पाई जाती है। चूना-पत्थर, डोलोमाइट, जिप्सम एवं कैलसियम सल्फेट कडप्पा और ऊपरी विन्ध्यन समूहों तक सीमित हैं। अधिकांश खनिज धारक चट्टानें प्रायद्वीपीय भारत में ही पायी जाती है। भारत के उत्तरी मैदान की आधार चट्टानों को जलोढ़ की मोटी पर्त ने पूर्णतः ढक लिया है अतः वहाँ खनिजों का अभाव है। देश का अधिकांश खजिन निम्नलिखित तीन पटियों में पाई जाती हैं।

1. उत्तरी पूर्वी पठार : यह देश की सबसे धनी खनिज पेटी है जिसमें छोटानागपुर का पठार, उड़ीसा का पठार, छत्तीसगढ़ का पठार तथा पूर्वी आन्ध्र प्रदेश का पठार अवस्थित है। इस पेटी में लौह अयस्क, मैंगनीज, अभ्रक, बॉक्साइट, चूना-पत्थर, डोलोमाइट, तांबा, थोरियम, यूरेनियम क्रोमियम, सिलिमेनाइट तथा फास्फेट के विशाल भण्डार हैं।

2. दक्षिणी-पश्चिमी पठार : यह पेटी कर्नाटक के पठार एवं निकटवर्ती तमिलनाडु के पठार पर फैली हुई है। यहाँ लौह अयस्क, मैंगनीज, बॉक्साइट आदि भारी मात्रा में पाये जाते हैं। देश की सभी तीनों सोने की खानें इसी पेटी में मौजूद हैं।

ज्ञातव्य हो कि शक्ति संसाधनों की विस्तृत चर्चा अलग अध्याय में किया गया है, अतः उनकी चर्चा इस अध्याय में नहीं किया जा रहा है।

3. उत्तर पश्चिम प्रदेश : इस पेट्टी का विस्तार खम्भात की खाड़ी से लेकर अरावली की श्रेणियों तक है। यहाँ अनेक अलौह धातुएँ, जैसे–चाँदी, सीसा, जस्ता, तांबा आदि मिलते हैं। बालु-पत्थर, ग्रेनाइट, संगमरमर, जिप्सम, मुल्तानी मिट्टी, डोलोमाइट, चूना पत्थर, नमक आदि के भी पर्याप्त भण्डार हैं।

हिमालय एक अन्य खनिज पेटी है, जहाँ तांबा, सीसा, जस्ता, कोबाल्ट आदि प्राप्य हैं।

धात्विक खनिज (लौह) :

लौह अयस्क, मैंगनीज, क्रोमाइट पाइराइट, निकिल आदि धात्विक खनिजों के सुन्दर उदाहरण हैं। ये अधिकतर उद्योगों के आधार होते हैं।

लौह-अयस्क :

लोहा आधुनिक सभ्यता की रीढ़ है। यह उद्योगों की जननी है। लोहा खान से शुद्ध रूप में नहीं मिलता बल्कि लौह अयस्क (Iron-Ore) के रूप में निकलता है। शुद्ध लोहे की मात्रा के आधार पर भारत में पाये जाने वाले लौह अयस्क तीन प्रकार के हैं–हेमाटाइट, मैग्नेटाइट और लिमोनाइट। भारत में पूरे विश्व के लौह भण्डार का एक चौथाई भाग आंकलित है।

ABDIEL SOLUTIONS ABSOL PATNA

चित्र-1 (घ).3 भारत में लौह अयस्क का वितरण

भारत के लौह-अयस्क के मुख्य तथ्य

प्रकार	लौह अंश % में	उपनाम	भण्डार (करोड़ टन में)
1. हेमाटाइट	68	लाल अयस्क	1231.7
2. मैग्नेटाइट	60	काला अयस्क	54.0
3. लिमोनाइट	40	पीला अयस्क	परीक्षणाधीन (अभी तक निश्चित नहीं)

भारत में लौह-अयस्क का उत्पादन

वर्ष	उत्पादन हजार टन में
2005 - 06	165230
2006 - 07	180917
2007 - 08	206939

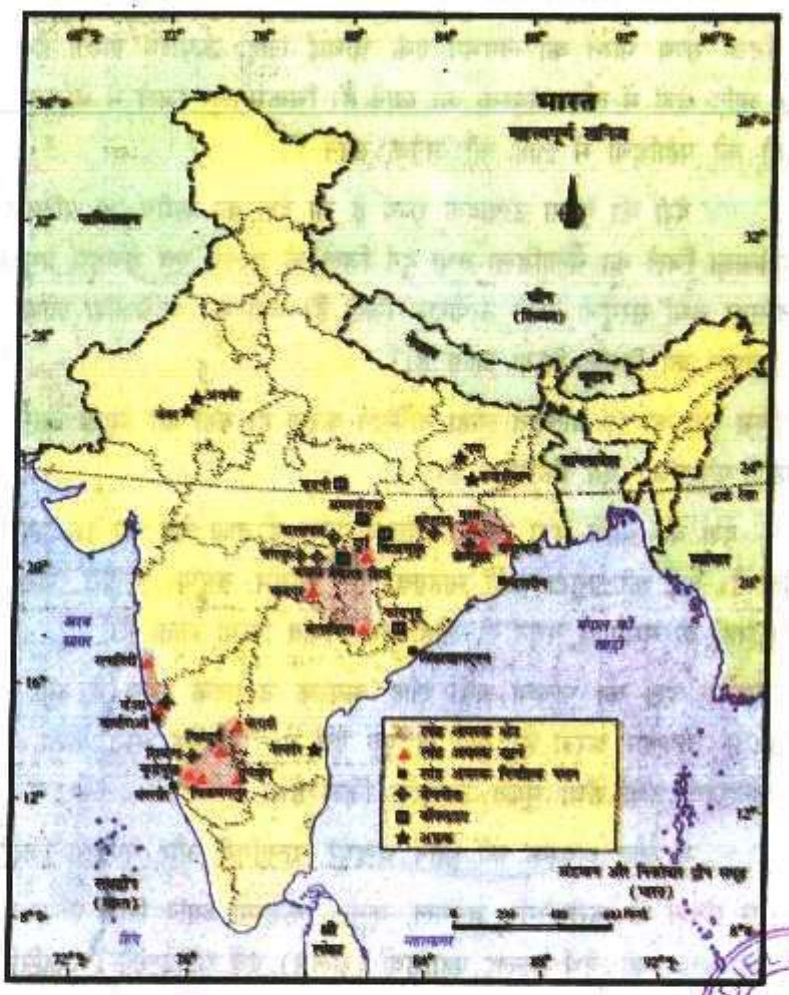

चित्र 1 (घ).4 : महत्वपूर्ण खनिजों का वितरण

ABSOL SOLUTIONS PATNA

वितरण :

भारत में लौह अयस्क प्रायः सभी राज्यों में पाया जाता है परन्तु यहाँ के कुल भण्डार का 96 प्रतिशत-कर्नाटक, छत्तीसगढ़, उड़ीसा, गोवा, झारखंड राज्यों में सीमित है। शेष भण्डार तमिलनाडु, आन्ध्र प्रदेश, महाराष्ट्र एवं अन्य राज्यों में अवस्थित है। भारत में 1950-51 में 42 लाख टन लोहे का उत्पादन हुआ था जो 2004-05 में बढ़कर 1427.1 लाख टन हो गया। अतः लोहे के उत्पादन में भारी विकास हुआ है।

कर्नाटक राज्य भारत का लगभग एक चौथाई लोहा उत्पादन करता है। यहाँ बेल्लारी, हास्पेट, संदूर आदि क्षेत्रों में लौह अयस्क की खानें हैं। चिकमंगलूर जिले में बाबाबूदन, कालाहांडी, एवं केमनगूडी की पहाड़ियों में लोहे की अनेक खानें हैं।

छत्तीसगढ़ देश का दूसरा उत्पादक राज्य है जो देश का करीब 20 प्रतिशत लोहा उत्पादन करता है। दांतेवाड़ा जिले का बैलाडिला तथा दुर्ग जिले के डल्ली एवं राजहरा प्रमुख उत्पादक हैं। रायगढ़ बिलासपुर तथा सरगुजा अन्य उत्पादक जिले हैं। यहाँ का अधिकांश लोहा विशाखापट्नम बंदरगाह से जापान को निर्यात किया जाता है।

उड़ीसा देश का 19 प्रतिशत लोहा उत्पादन करता है। यहाँ की प्रमुख खानें-गुरू महिषानी, बादाम पहाड़ (मयूरगंज) एवं किरिबुरू हैं।

गोवा देश का चौथा बड़ा लोहा उत्पादक राज्य है तथा देश का 16 प्रतिशत लोहा यहीं से प्राप्त होता है। यहाँ की प्रमुख खानें साहक्वालिम, संग्यूम, क्यूपेम, सतारी, पौंडा एवं वियोलिम में स्थित हैं। यहाँ के मर्मागांव पत्तन से लोहा का निर्यात किया जाता है।

झारखण्ड देश का पांचवां बड़ा लौह अयस्क उत्पादक राज्य है और 15 प्रतिशत से अधिक लोहे का उत्पादन करता है। यहाँ के पू० एवं प० सिंहभूम, सरायकेला, पलामू, धनबाद, हजारीबाग, लोहरदगा तथा राँची मुख्य उत्पादक जिले हैं।

महाराष्ट्र में लौह अयस्क की खानें चन्द्रपुर, रत्नागिरी और भण्डारा जिलों में स्थित है।

आन्ध्र प्रदेश के करीमनगर, वारंगल, कुर्नूल, कड़प्पा आदि जिले लौह अयस्क उत्पादक हैं, जबकि **तमिलनाडु** की तीर्थ मल्लई पहाड़ियों (सलेम) एवं यादपल्ली (नीलगिरि) क्षेत्र में लोहे के भण्डार हैं।

ABDIEL SOLUTIONS ABSOL PATNA

मैंगनीज अयस्क :

> **क्या आप जानते हैं?**
> 1 टन इस्पात बनाने में लगभग 10 किलोग्राम मैंगनीज का उपयोग किया जाता है।

मैंगनीज के उत्पादन में भारत का स्थान विश्व में रूस एवं दक्षिण अफ्रीका के बाद तीसरा है। यह मुख्य रूप से जंगरोधी इस्पात बनाने तथा लोहा एवं मैंगनीज के मिश्र धातु बनाने के उपयोग में आता है। इसका उपयोग शुष्क बैटरियों के निर्माण, फोटोग्राफी, चमड़ा एवं माचिस उद्योग में भी होता है। साथ ही इसका उपयोग पेंट तथा कीटनाशक दवाओं के बनाने में भी किया जाता है। भारत के कुल उत्पादन का 85 प्रतिशत मैंगनीज का उपयोग मिश्र धातु बनाने में किया जाता है।

वितरण :

भारत में मैंगनीज का संचित भण्डार 1670 लाख टन है। विश्व में जिम्बाब्वे के बाद भारत में ही मैंगनीज का सबसे बड़ा संचित भण्डार है जो विश्व के कुल संचित भण्डार का 20 प्रतिशत है।

भारत में उत्पादन के मुख्य क्षेत्र उड़ीसा, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक एवं आन्ध्र प्रदेश हैं। भारत का 78 प्रतिशत से ज्यादा मैंगनीज अयस्क का भण्डार महाराष्ट्र के नागपुर तथा भण्डारा जिलों से लेकर मध्य प्रदेश के बालाघाट एवं छिन्दवाड़ा जिलों तक फैली पेटी में मिलते हैं।

मैंगनीज उत्पादन

वर्ष	हजार टन में
2005-06	1906.35
2006-07	2143
2007-08	2512

उड़ीसा भारत में मैंगनीज के उत्पादन में अग्रणी है। यहाँ देश के कुल उत्पादन का 37 प्रतिशत मैंगनीज उत्पादन होता है। यहाँ मैंगनीज की मुख्य खदानें–सुन्दरगढ़, कालाहांडी, रायगढ़, बोलांगिर, क्योंझर, जाजपुर एवं मयूरभंज जिलों में है।

महाराष्ट्र भारत के कुल उत्पादन का लगभग एक चौथाई मैंगनीज उत्पादन करता है। इस राज्य को मुख्य मैगनीज उत्पादन पेटी नागपुर तथा भण्डारा जिले में है। इस पेटी में उत्तम कोटि के मैंगनीज अयस्क मिलते हैं। रत्नागिरी में उच्च कोटि के मैंगनीज का उत्पादन होता है।

चित्र- 1 (घ), 5 भारत में मैंगनीज अयस्क का वितरण

मध्य प्रदेश 21 प्रतिशत मैंगनीज पैदाकर देश का तीसरा बड़ा उत्पादक राज्य है। बालाघाट तथा छिन्दवाड़ा जिलों में मैंगनीज का उत्पादन होता है।

कर्नाटक में मैंगनीज शिमोगा, चित्रदुर्ग, तुमकुर, बेलारी, उत्तरी कनारा, धारवाड़, चिकमंगलूर और बीजापुर जिले मुख्य उत्पादक हैं। पहले यहाँ देश का एक चौथाई मैंगनीज उत्पादन होता था किन्तु अब उत्पादन कम हो रहा है।

आन्ध्र प्रदेश में देश के सकल उत्पादन का 6 प्रतिशत ही मैंगनीज का उत्पादन होता है। यहाँ मुख्य उत्पादक जिला श्रीकाकुलम है। अन्य उत्पादक जिलों में विशाखापत्तनम, कडप्पा, विजयनगर तथा गुंटूर हैं।

धात्विक खनिज (अलौह) :

इसके अंतर्गत बॉक्साइट, सोना, चाँदी, तांबा, टिन, सीसा, जस्ता आदि आते हैं। ये खनिज दैनिक जीवन में बड़े काम. के. हैं किन्तु भारत में इन खनिजों का अभाव है।

बॉक्साइट : यह एक अलौह धातु निक्षेप है जिससे अल्यूमिनियम नामक धातु निकाली जाती है। भारत में बॉक्साइट का इतना भण्डार है, कि अल्यूमिनियम में हम आत्मनिर्भर हो सकते हैं। इसका बहुमुखी उपयोग वायुयान निर्माण, विद्युत उपकरण निर्माण, घरेलु साज-सज्जा के सामानों का निर्माण, बर्तन बनाने, सफेद सीमेंट तथा रासायनिक वस्तुएँ बनाने में किया जाता है। भारत में बाक्साइट का अनुमानित भण्डार 3037 मिलियन टन है।

भारत में बाक्साइट उत्पादन :

वर्ष	उत्पादन हजार टन में
1951	68.4
1961	475.9
1971	1517.1
1981	1954.6
1991	4977.0
2004-05	11598.0
2005-06	12596.
2006-07	15661
2007-08	24678 (अनुमानित)

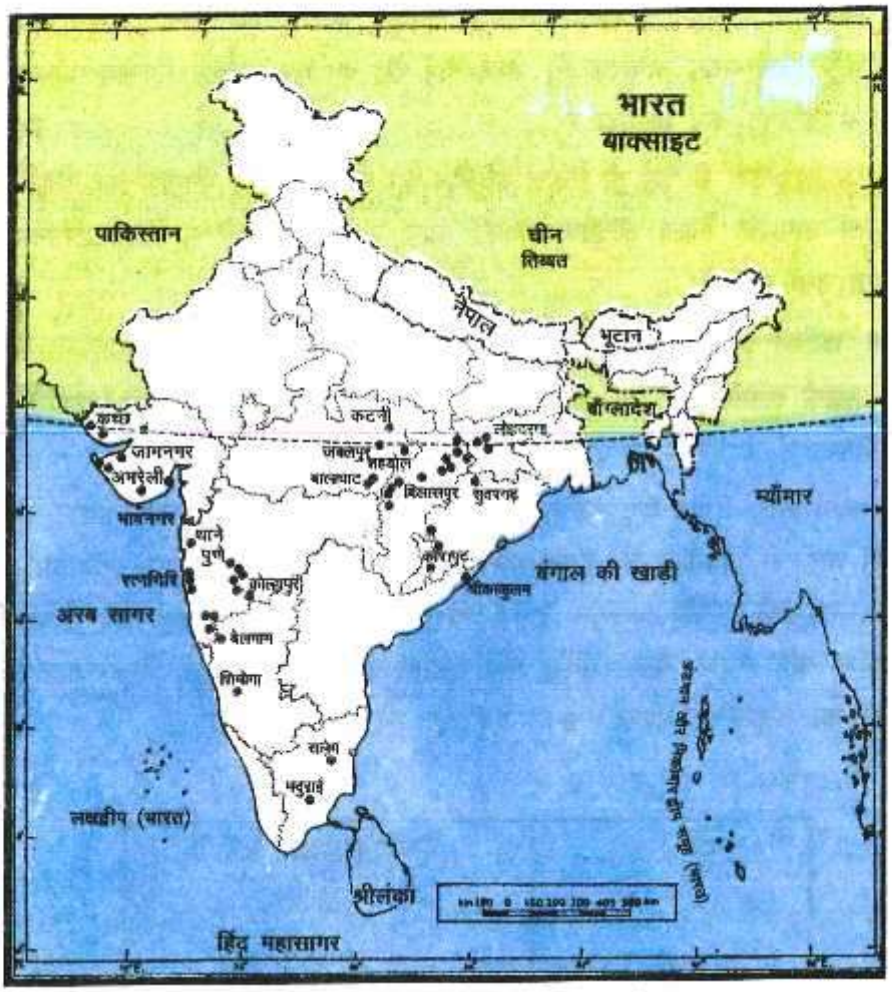

चित्र-1 (घ).6 : भारत में बाक्साइट का वितरण

वितरण :

बाक्साइट भारत के अनेक क्षेत्रों में मिलता है किन्तु मुख्य रूप से इसका भंडार उड़ीसा, गुजरात, झारखण्ड, महाराष्ट्र, छत्तीसगढ़, कर्नाटक, तमिलनाडु एवं उत्तर प्रदेश में अवस्थित है। देश का आधा से अधिक बाक्साइट का भंडार उड़ीसा राज्य में है। उड़ीसा भारत के कुल उत्पादन का 42 प्रतिशत बाक्साइट उत्पादन करता है। कालाहांडी, बोलंगीर, कोरापुट, सुन्दरगढ़ तथा संभलपुर बाक्साइट के मुख्य उत्पादक जिले हैं।

गुजरात भारत का 17.35 प्रतिशत बाक्साइट उत्पादन करके दूसरे स्थान पर है। जामनगर, कैरा, सबरकंठ, कच्छ तथा सूरत महत्वपूर्ण उत्पादक जिले हैं।

झारखण्ड बाक्साइट के उत्पादन में तीसरा स्थान रखता है तथा देश का 14 प्रतिशत बाक्साइट उत्पादन करता है। इसके लोहरदगा, राँची, लातेहार एवं पलामू मुख्य उत्पादक जिले हैं।

महाराष्ट्र के कोलाबा, रत्नागिरी तथा कोल्हापुर जिलों में बाक्साइट का खनन होता है तथा देश का 12 प्रतिशत उत्पादन करता है।

छत्तीसगढ़ भारत का 6 प्रतिशत से अधिक बॉक्साइट उत्पादन करता है। सरगूजा का पठारी प्रदेश, रायगढ़ तथा विलासपुर जिले इसके उत्पादन के लिए प्रसिद्ध है।

अन्य उत्पादक राज्यों में कर्नाटक में बाक्साइट के प्रमुख निक्षेप बेलगांम जिले में पाये जाते हैं। तमिलनाडु के नीलगिरि, सलेम, मदुरई और कोयम्बटूर जिले, उत्तर प्रदेश के बांदा जिले बॉक्साइट के अल्प उत्पादक हैं। जम्मू और कश्मीर के पुंछ एवं उधमपुर जिलों में उत्तम कोटि के बॉक्साइट पाए जाते हैं। भारत विभिन्न देशों को बॉक्साइट निर्यात करता है। मुख्य आयातक देश इटली, यू०के० जर्मनी एवं जापान हैं।

तांबा :

ताँबा एक अति उपयोगी अलौह धातु है। यह बिजली का अच्छा संचालक है जिससे इसका ज्यादा उपयोग विद्युत उपकरण बनाने में किया जाता है। इससे बर्तन एवं सिक्के भी बनाये जाते हैं। इसे अन्य धातुओं में मिलाकर अनेक सामान बनाये जाते हैं। भारत में तांबा का अभाव है। देश में ताँबे का कुल भण्डार 125 करोड़ टन है। 1951 में मात्र 3.75 लाख टन ताँबे का उत्पादन हुआ। 1990-91 में यह बढ़ कर 52.49 लाख टन हो गया, किन्तु 2000-01 में इसका उत्पादन घटकर कर 30.85 लाख टन रह गया है। हिन्दुस्तान कॉपर लिमिटेड तांबा का खनन एवं प्रगलन का कार्य करती है। झारखंड का पू० एवं प० सिंहभूम जिले ताँबा का सबसे बड़ा उत्पादक है। इसके अतिरिक्त झारखण्ड में हजारीबाग, पलामू आदि जिलों में अल्प

ताँबा उत्पाद

वर्ष	हजार टन में
2005-06	125
2006-07	150
2007-08	175

मात्रा में तांबा पाया जाता है। राजस्थान के खेतड़ी-सिंघाना भेखला में तांबे का विस्तृत क्षेत्र है। मध्य प्रदेश में बालाघाट तथा छत्तीसगढ़ में दुर्ग जिलों में ताँबे की खानें हैं। इसके साथ ही आन्ध्र प्रदेश में खम्मन, गुंटूर तथा करनूल जिले, कर्नाटक में चित्रदूर्ग एवं हासन जिले और महाराष्ट्र के चंद्रापुर जिला में भी तांबा निकाले जाते हैं।

अधात्विक खनिज

भारत में धात्विक खनिजों के अतिरिक्त अनेक प्रकार के अधात्विक खनिजों के भण्डार हैं। इन खनिजों का औद्योगिक विकास में बड़ा ही योगदान है। देश में 2000-01 में 40 से अधिक अधात्विक खनिजों का व्यापारिक पैमाने पर उत्पादन हुआ है। आर्थिक रूप से अभ्रक, चूना-पत्थर, डोलोमाइट, फास्फेट, ग्रेफाइट, जिप्सम, मैग्नेसाइट आदि महत्वपूर्ण है।

अभ्रक

भारत विश्व में शीट अभ्रक का अग्रणी उत्पादक है। अब तक इलोक्ट्रोनिक्स उद्योगों में इसका उपयोग होता रहा है, किन्तु कुछ कृत्रिम विकल्प आ जाने से अभ्रक के उत्पादन एवं निर्यात दोनों पर बुरा असर पड़ा है। वैसे तो प्राचीन काल से अभ्रक का उपयोग आयुर्वेदिक दवाओं के लिए किये जाते रहे हैं लेकिन विद्युत उपकरण में इसका खास उपयोग होता है क्योंकि यह विद्युत रोधक होने के कारण उच्च विद्युत शक्ति को सहन कर सकता है।

भारत में उत्पादन की दृष्टि से, अभ्रक निक्षेप की तीन पेटियाँ हैं, जो बिहार, झारखंड, अन्ध्रप्रदेश तथा राजस्थान राज्यों के अंतर्गत आती है। भारत में अभ्रक के कुल भण्डार 59065 टन है। 2002-03 में इसका उत्पादन 1217 टन था। बिहार झारखण्ड में उत्तम कोटि के रूबी अभ्रक का उत्पादन होता है। पश्चिम में गया जिले से हजारीबाग, मुंगेर होते हुए पूर्व में भागलपुर तक फैला हुआ है। इसके अतिरिक्त धनबाद, पलामू, राँची एवं सिंहभूम जिलों मे भी अभ्रक के भण्डार मिले हैं। बिहार झारखंड भारत का 80 प्रतिशत अभ्रक का उत्पादन करता है। आन्ध्रप्रदेश के नेल्लोर जिले में अभ्रक का उत्पादन होता है। राजस्थान देश का तीसरा अभ्रक उत्पादक राज्य है। यहाँ जयपुर, उदयपुर, भीलवाड़ा, अजमेर आदि जिलों में अभ्रक की पेटी फैली हुई है। संयुक्त राज्य अमेरिका भारतीय अभ्रक का मुख्य आयातक है।

ABSOL ABSOLUTE SOLUTIONS PATNA

चूना-पत्थर :

भारत के चूना पत्थर का 76 प्रतिशत सीमेंट 16 प्रतिशत लौह इस्पात तथा 4 प्रतिशत रसायन उद्योग में उपयोग किया जाता है। शेष 4 प्रतिशत का उपयोग उर्वरक, कागज एवं चीनी उद्योगों में होता है। देश का 35 प्रतिशत चूना पत्थर मध्यप्रदेश में पाया जाता है। अन्य उत्पादक राज्यों में - छत्तीसगढ़, आन्ध्रप्रदेश, गुजरात, राजस्थान, कर्नाटक, महाराष्ट्र, उड़ीसा, बिहार, झारखंड, उत्तर प्रदेश आदि हैं।

खनिजों का आर्थिक महत्व :

पृथ्वी पर जैसे जल और थल अतिमहत्वपूर्ण खजाने हैं ठीक उतने ही महत्वपूर्ण खनिज संसाधन भी हैं। खनिज संसाधन के अभाव में देश के औद्योगिक विकास को गति एवं दिशा नहीं दे सकते। फलतः देश का आर्थिक विकास अवरूद्ध हो सकता है। विश्व के बहुत से देशों में खनिज संपदा राष्ट्रीय आय के प्रमुख स्रोत बने हुए हैं। खनिजों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि एक बार उपयोग में आने के पश्चात ये लगभग समाप्त हो जाते हैं। इसका संबंध हमारे वर्त्तमान एवं भविष्य के कल्याण से है। खनिज ऐसे क्षयशील संसाधन हैं, जिन्हें दोबारा नवीनीकृत नहीं किया जा सकता। अतः खनिजों के संरक्षण की परम आवश्यकता है।

खनिजों का संरक्षण :

खनिज क्षयशील एवं अनवीकरणीय संसाधन हैं। इनकी मात्रा सीमित है। इनका पुनर्निमाण असंभव है। खनिज उद्योगों का आधार है, किन्तु औद्योगिक विकास के लिए खनिजों का अतिशय दोहन एवं उपयोग उनके अस्तित्व के लिए संकट है। अतः खनिजों का संरक्षण एवं प्रबंधन आवश्यक है। खनिज संसाधन के विवेक पूर्ण उपयोग तीन बातों पर निर्भर है- खनिजों के निरंतर दोहन पर नियंत्रण, उनका बचत पूर्वक उपयोग तथा कच्चे माल के रूप में सस्ते विकल्पों की खोज। खनिजों पर नियंत्रण के अलावे उनके विकल्पों को खोजना, खनिजों के अपशिष्ट पदार्थों का बुद्धिमत्तापूर्ण उपयोग, पारिस्थितिकी पर पड़ने वाले कुप्रभाव पर नियंत्रण, खनिज निर्माण के लिए चक्रीय पद्धति को अपनाना प्रबंधन कहलाता है। अगर खनिजों के संरक्षण के साथ-साथ प्रबंधन पर ध्यान दिया जाये तो खनिज संकट से निबटा जा सकता है।

अभ्यास प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न :

1. भारत में लगभग कितने खनिज पाये गये हैं ?

(क) 50 (ख) 100

(ग) 150 (घ) 200

2. इन में से कौन लौह युक्त खनिज का उदाहरण है?

(क) मैंगनीज (ख) अभ्रक

(ग) बॉक्साइट (घ) चूना-पत्थर

3. निम्नलिखित में कौन अधात्विक खनिज का उदाहरण है?

(क) सोना (ख) टिन

(ग) अभ्रक (घ) ग्रेफाइट

4. किस खनिज को उद्योगों की जननी माना गया है ?

(क) सोना (ख) तांबा

(ग) लोहा (घ) मैंगनीज

5. कौन लौह अयस्क का एक प्रकार है?

(क) लिगनाइट (ख) हेमाटाइट

(ग) बिटुमिनस (घ) इन में से सभी।

6. कौन भारत का सबसे बड़ा लौह उत्पादक राज्य है?

(क) कर्नाटक (ख) गोवा

(ग) उड़ीसा (घ) झारखंड

7. छत्तीसगढ़ भारत का कितना प्रतिशत लौह अयस्क उत्पादन करता है?

(क) 10 (ख) 20

(ग) 30 (घ) 40

8. मैंगनीज उत्पादन में भारत का विश्व में क्या स्थान है?

(क) प्रथम (ख) द्वितीय

(ग) तृतीय (घ) चतुर्थ

9. एक टन इस्पात बनाने में कितने मैंगनीज का उपयोग होता है?

(क) 5 कि०ग्रा० (ख) 10कि०ग्रा०

(ग) 15कि०ग्रा० (घ) 20कि०ग्रा०

10. उड़ीसा किस खनिज का सबसे बड़ा उत्पादक है?

(क) लौह अयस्क (ख) मैंगनीज

(ग) टिन (घ) ताँबा

11. अल्युमिनियम बनाने के लिए किस खनिज की आवश्यकता पड़ती है?

(क) मैंगनीज (ख) टिन

(ग) लोहा (घ) बॉक्साइट

12. देश में तांबे का कुल भण्डार कितना है

(क) 100 करोड़ टन (ख) 125 करोड़

(ग) 150 करोड़ टन (घ) 175 करोड़ टन

13. बिहार झारखण्ड में देश का कितना प्रतिशत अभ्रक का उत्पादन होता है?

(क) 60 (ख) 70

(ग) 80 (घ) 90

14. सीमेंट उद्योग का सबसे प्रमुख कच्चा माल क्या है?

(क) चूना-पत्थर (ख) बाक्साइट

(ग) ग्रेनाइट (घ) लोहा

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. खनिज क्या है?
2. धात्विक खनिज के दो प्रमुख पहचान क्या हैं?
3. खनिजों की विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
4. लौह अयस्क के प्रकारों के नाम लिखिए।
5. लोहे के प्रमुख उत्पादक राज्यों के नाम लिखिए।
6. झारखंड के मुख्य लौह उत्पादक जिलों के नाम लिखिए।
7. मैंगनीज के उपयोग पर प्रकाश डालिए।
8. अल्यूमिनियम के उपयोग का उल्लेख कीजिए।
9. अभ्रक का उपयोग क्या है?
10. चूना-पत्थर की क्या उपयोगिता है?
11. खनिजों की मुख्य विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
12. खनिजों के संरक्षण एवं प्रबंधन से क्या समझते हैं?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. खनिज कितने प्रकार के होते हैं? प्रत्येक का सोदाहरण परिचय दीजिये।
2. धात्विक एवं अधात्विक खनिजों में क्या अंतर है? तुलना कीजिये।
3. भारत की खनिज पेटियों का नाम लिखकर किन्हीं दो का वर्णन कीजिये ।
4. लौह अयस्क का वर्गीकरण कर उनकी विशेषताओं को लिखिये।
5. भारत में लौह अयस्क के वितरण पर प्रकाश डालिये।
6. मैंगनीज अथवा बाक्साइट की उपयोगिता तथा देश में इनके वितरण का वर्णन कीजिये।
7. अभ्रक की उपयोगिता एवं वितरण पर प्रकाश डालिये।
8. खनिजों के संरक्षण के उपाय सुझाइये।

मानचित्र कार्य

1. भारत के एक मानचित्र पर महत्वपूर्ण खनिजों के वितरण को दर्शाइये।
2. लौह अयस्क के मुख्य उत्पादक केन्द्रों को भारत के मानचित्र में अंकित कीजिये।
3. पूरे पृष्ठ पर भारत का मानचित्र बनाकर निम्नलिखित को दिखाइये:-

   मैंगनीज, बाक्साइट तथा तांबा उत्पादक क्षेत्र ।
4. विभिन्न चट्टानों तथा खनिजों के टुकड़े उपलब्ध कर भूगोल प्रयोगशाला में संग्रह कीजिये।

प्रयोग कीजिये:-

(क) प्लाईउड या गत्ते पर निर्मित भारत का मानचित्र तैयार कर विभिन्न खनिजों के उत्पादक स्थान पर अलग-अलग रंग का बल्ब लगाइये तथा प्रत्येक खनिज हेतु एक एक स्वीच लगाइये। अब किसी एक खनिज का स्वीच दबाने पर वह मानचित्र में बल्ब जल उठेगा और हम समझ सकते हैं कि कौन खनिज कहाँ पाया जाता है।

(ख) खनिजों की महत्ता, उपलब्धता एवं संरक्षण के संबंध में अपने भूगोल शिक्षक से विमर्श कीजिये।

(ग) शिक्षक-अभिभावक की आज्ञा लेकर अपने पड़ोसी राज्यों के खनिज बहुल क्षेत्रों का भ्रमण, खनिजों का अवलोकन तथा उनका संग्रह कीजिये।

(ङ) शक्ति (ऊर्जा) संसाधन

शक्ति अर्थात ऊर्जा विकास की कुंजी है। मानव सदियों से अपने विभिन्न क्रिया-कलाप हेतु शक्ति (Energy) के जैव एवं अजैव रूपों का प्रयोग करते आ रहा है। मानव ने प्रारम्भिक चरणों में अपने शारीरिक शक्ति का प्रयोग किया, फिर पशुओं को परिवहन के कार्य में प्रयुक्त किया। मानव के अर्थिक क्रिया-कलाप के बढ़ने के साथ ही ऊर्जा या शक्ति के नये-नये स्रोतों की खोज हुई। मशीनों को चलाने के लिए पवन चक्की का उपयोग किया जाने लगा। शक्ति के साधनों का वास्तविक विकास 18 वीं शताब्दी में औद्योगिक क्रान्ति के साथ शुरू हुआ। कोयले का उपयोग कर वाष्प-शक्ति का विकास इंग्लैण्ड में हुआ। शीघ्र ही इसका प्रसार यूरोप के अन्य देशों में हो गया। समय बीतने के साथ ऊर्जा के नये स्रोत विकसित हुए। पेट्रोलियम ने कोयले का स्थान ले लिया। कालांतर में परमाणु शक्ति का विकास किया गया। आज शक्ति अथवा ऊर्जा के स्रोत ही विकास एवं औद्योगिकरण के आधार हैं। यही कारण है कि कोयला, पेट्रोलियम, प्राकृतिक गैस, जल विद्युत एवं आणविक ऊर्जा स्रोतों को **"वाणिज्यिक ऊर्जा स्रोत"** कहा जाता है।

शक्ति संसाधन के प्रकार :

शक्ति संसाधन के वर्गीकरण के विविध आधार हो सकते हैं। **उपयोग स्तर के आधार पर** शक्ति के दो प्रकार हैं- सतत् शक्ति एवं समापनीय शक्ति। सौर किरणें, भूमिगत उष्मा, पवन, प्रवाहित जल आदि सतत् शक्ति स्रोत हैं जबकि कोयला, पेट्रोलियम, प्राकृतिक गैस एवं विखण्डनीय तत्व समापनीय शक्ति स्रोत के उदाहरण हैं।

उपयोगिता के आधार पर ऊर्जा को दो भागों में विभक्त किया जाता है। पहला प्राथमिक ऊर्जा, जैसे- कोयला, पेट्रोलियम, प्राकृतिक गैस तथा रेडियोधर्मी खनिज आदि तथा दूसरा गौण ऊर्जा, जैसे- विद्युत, क्योंकि यह प्राथमिक ऊर्जा से प्राप्त किया जाता है।

स्रोत की स्थिति के आधार पर शक्ति संसाधन को दो भागों में वर्गीकृत किया जाता है। पहला क्षयशील शक्ति संसाधन जैसे-कोयला, पेट्रोलियम, प्राकृतिक गैस तथा आण्विक खनिज आदि

तथा दूसरा अक्षयशील शक्ति संसाधन, जैसे- **प्रवाही जल, पवन, लहरें, सौर शक्ति** आदि। **संरचनात्मक गुणों के आधार पर** ऊर्जा के दो स्रोत हैं- जैविक ऊर्जा स्रोत तथा अजैविक ऊर्जा स्रोत। मानव एवं प्राणी शक्ति को जैविक तथा जल शक्ति, पवन-शक्ति, सौर शक्ति तथा इंधन शक्ति (खनिज ऊर्जा) आदि को अजैविक शक्ति स्रोत के अन्तर्गत रखा जाता है। शक्ति के स्रोतों को **समय के आधार पर** पारम्परिक तथा गैर पारम्परिक शक्ति संसाधन के रूप में वर्गीकृत किया जाता है। कोयला, पेट्रोलियम तथा प्राकृतिक गैस पारम्परिक तथा सूर्य, पवन, ज्वार, परमाणु ऊर्जा तथा गर्म झरने आदि गैर पारम्परिक शक्ति संसाधन के उदाहरण हैं।

आधुनिक काल में शक्ति के मुख्य स्रोतों में कोयला, पेट्रोलियम, प्राकृतिक गैस, प्रवाहित जल एवं आण्विक खनिज के अध्ययन के साथ-साथ सौर शक्ति, पवन शक्ति, ज्वारीय शक्ति, भूतापीय शक्ति तथा जैव शक्ति का भी अध्ययन आवश्यक हो गया है।

पारम्परिक ऊर्जा (शक्ति) स्रोत :

कोयला, पेट्रोलियम, प्राकृतिक गैस जैसे खनिज ईंधन जो जीवाश्म ईंधन के नाम से भी जाने जाते हैं ये पारम्परिक शक्ति संसाधन हैं तथा ये समाप्य संसाधन है।

कोयला (Coal) :

कोयला शक्ति और ऊर्जा का महत्वपूर्ण स्रोत है। 1 जनवरी 2008 तक भारत में 1200 मीटर की गहराई तक पाये जाने वाले कायेले का कुल अनुमानित भण्डार 26,454 करोड़ टन आंका गया है। 2007-08 में कोयले का कुल उत्पादन 456.373 मिलियन टन था।

भूगर्भिक दृष्टि से भारत के समस्त कोयला भण्डार को दो मुख्य भागों में बांटा जा सकता है:-

1. गोंडवाना समूह : इस समूह में भारत के 96 प्रतिशत कोयले का भण्डार है तथा कुल उत्पादन का 99 प्रतिशत भाग प्राप्त होता है। यहाँ के कोयले का निर्माण लगभग 20 करोड़ वर्ष पूर्व में हुआ था। गोंडवाना कोयला क्षेत्र मुख्यतः चार नदी-घाटियों में पाये जाते हैं- 1. दामोदर घाटी, 2. सोन घाटी, 3. महानदी घाटी तथा 4. वार्धा-गोदावरी घाटी।

ABDIEL SOLUTIONS ABSOL PATNA

2. टर्शियरी समूह : गोंडवाना समूह के बाद टर्शियरी समूह के कोयले का निर्माण हुआ। यह 5.5 करोड़ वर्ष पुराना है। टर्शियरी कोयला मुख्यतः असम, अरूणाचल प्रदेश, मेघालय और नागालैण्ड में पाया जाता है।

कोयले का वर्गीकरण :

कार्बन की मात्रा के आधार पर कोयला को चार वर्गों में रखा गया है :

1. ऐंथ्रासाइट (Anthracite) : यह सर्वोच्च कोटि का कोयला है जिसमें कार्बन की मात्रा 90% से अधिक होती है। जलने पर यह धुआँ नहीं देता तथा देर तक अत्यधिक उष्मा देता है। इसे कोकिंग कोयला भी कहा गया है तथा धातु गलाने में काम आता है।

2. बिटुमिनस (Bituminus) : यह 70 से 90% कार्बन की मात्रा धारण किये हुए रहता है तथा इसे परिष्कृत कर कोकिंग कोयला बनाया जा सकता है। भारत का अधिकतर कोयला इस श्रेणी का है।

3. लिग्नाइट (Lignite) : यह निम्न कोटि का कोयला माना जाता है जिसमें कार्बन की मात्रा 30 से 70% होता है। यह कम उष्मा तथा अधिक धुआँ देता है। इसे भूरा-कोयला भी कहते हैं।

4. पीट (Peat) : इसमें कार्बन की मात्रा 30% से भी कम पाया जाता है। यह पूर्व के दलदली भागों में पाया जाता है।

वर्ष	उत्पादन मिलियन टन में
2005-06	407
2006-07	431
2007-08	456

गोंडवाना समूह का कोयला क्षेत्र :

झारखण्ड - कोयले के भण्डार एवं उत्पादन की दृष्टि से झारखण्ड का देश में पहला स्थान है। यहाँ देश का 30 प्रतिशत से भी अधिक कोयला का सुरक्षित भण्डार है तथा उत्पादन 23 प्रतिशत से अधिक है। झरिया, बोकारो, गिरिडीह, कर्णपुरा, रामगढ़ इस राज्य के प्रमुख उत्पादक क्षेत्र हैं। पश्चिम बंगाल के रानीगंज कोयला क्षेत्र का कुछ भाग इसी राज्य में पड़ता है।

धातु उद्योग में उपयोग किया जाने वाला कोयला इन्हीं दामोदर घाटी क्षेत्र से ही प्राप्त किया जाता है। लोहा-इस्पात कारखाने को अधिकतर कोकिंग कोल भी इन्हीं क्षेत्रों से प्राप्त होता है। इस कोयला क्षेत्र का महत्व अब घटता जा रहा है। 1970 में इस क्षेत्र से देश का 47 प्रतिशत कोयले का उत्पादन हुआ जबकि 2004-05 में यह घट कर मात्र 23 प्रतिशत रह गया है।

ABSOL ABODE SOLUTIONS PATNA

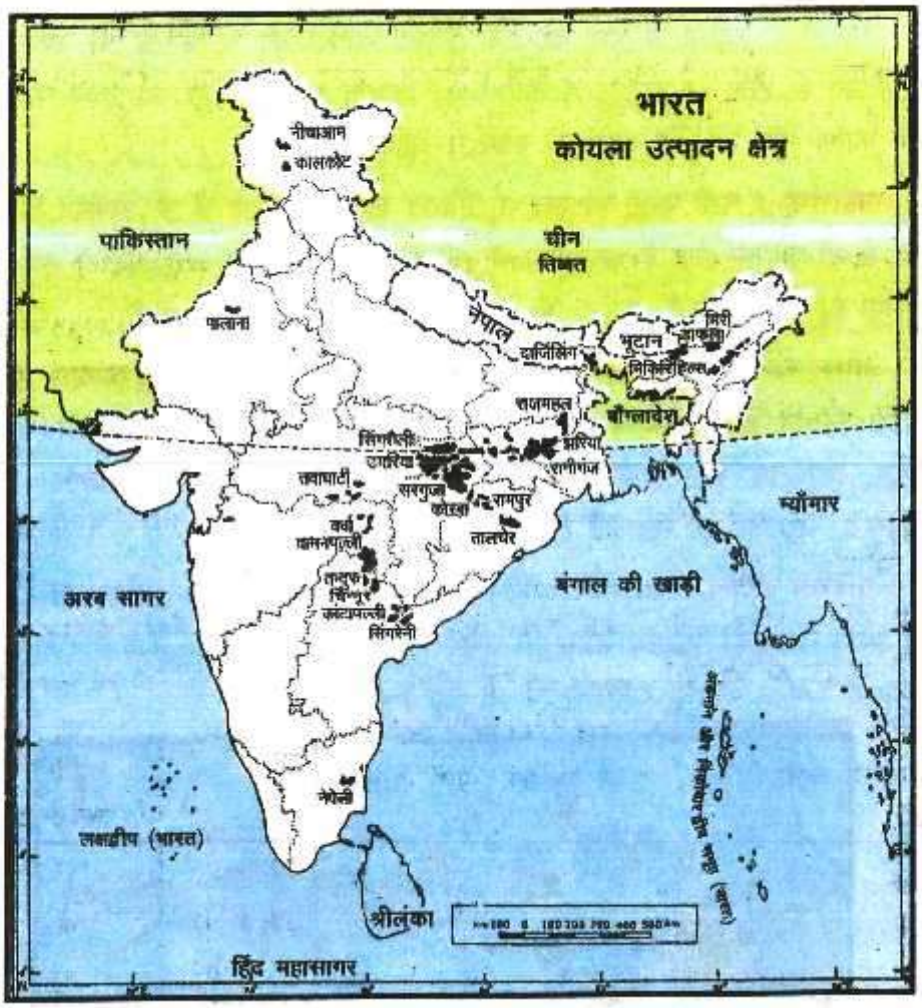

चित्र-1 (ङ).1 भारत के प्रमुख कोयला क्षेत्र

छत्तीसगढ़– सुरक्षित भण्डार की दृष्टि से इस राज्य का स्थान तीसरा किन्तु उत्पादन में यह भारत का दूसरा बड़ा राज्य है। यहाँ देश का 15 प्रतिशत सुरक्षित भण्डार है लेकिन उत्पादन 16 प्रतिशत होता है। उत्तरी छत्तीसगढ़ के मुख्य कोयला क्षेत्र चिरिमिरी, कुरसिया, विश्रामपुर, झिलमिली, सोनहाट, लखनपुर आदि हैं। हासदो-अरंड कोरबा एवं मांड़-रायगढ़ दक्षिणी छत्तीसगढ़ के कोयला क्षेत्र हैं।

उड़ीसा : उड़ीसा में देश का एक चौथाई कोयले का भण्डार है पर उत्पादन मात्र 14.6 प्रतिशत ही होता है। तालचर में कोयले का विशाल भण्डार है पर यह उच्च कोटि के न होने के कारण भाप एवं गैस बनाने के काम में आता है।

महाराष्ट्र : यहाँ भारत का मात्र 3 प्रतिशत कोयला सुरक्षित है पर उत्पादन देश का 9 प्रतिशत से भी अधिक होता है। इस राज्य में अधिकतर कोयला चाँदा-वर्धा, कांपटी तथा बंदेर से प्राप्त होता है।

मध्य प्रदेश : इस राज्य में देश का मात्र 7 प्रतिशत कोयले का भण्डार है क्योंकि अधिकांश कोयला क्षेत्र छत्तीसगढ़ में चला गया है। यहाँ अब प्रमुख कोयला उत्पादन सिंगरौली, सोहागपुर, जोहिल्ला तथा उमरिया में होता है। दूसरा कोयला उत्पादक सतपुड़ा क्षेत्र का पेंच-कान्हन, पथखेड़ा एवं मोहपानी हैं।

पश्चिम बंगाल : यह राज्य सुरक्षित भण्डार की दृष्टि से देश का चौथा एवं उत्पादन में सातवाँ स्थान रखता है। रानीगंज सबसे महत्वपूर्ण कोयला क्षेत्र है जिसका कुछ भाग झारखण्ड में पड़ गया हैं । कुछ कोयला दार्जिलिंग में भी पैदा किया जाता है।

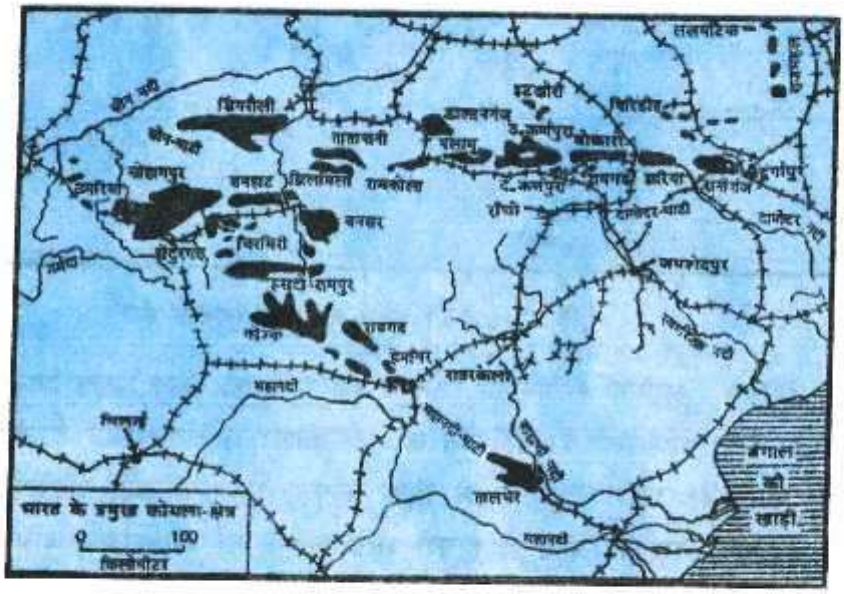

चित्र-1 (ङ).2 : भारत के प्रमुख कोयला क्षेत्र

टर्शियरीय कोयला क्षेत्र :

टर्शियरी युग में बना कोयला नया एवं घटिया किस्म का होता है। यह कोयला मेघालय में दारगिरी, चेरापूंजी, लेतरिंग्यू, माओलौंग और लांगरिन क्षेत्र से निकाला जाता है। ऊपरी असम में माकुम, जयपुर, नजिरा आदि कोयले के क्षेत्र हैं। अरूणाचल प्रदेश में नामचिक और नामरूक कोयला क्षेत्र है। जम्मू और कश्मीर में कालाकोट से कोयला निकाला जाता है।

चित्र-1 (ङ).3 : परंपरागत ऊर्जा स्रोत

लिग्नाइट कोयला क्षेत्र :

यह एक निम्न कोटि का कोयला होता है। इसमें नमी ज्यादा तथा कार्बन कम होता है अतः धुआँ अधिक देता है। लिग्नाइट कोयले का भण्डार मुख्य रूप से तमिलनाडु के लिग्नाइट बेसिन में पाया जाता है। यहाँ देश का 94 प्रतिशत लिग्नाइट कोयले का सुरक्षित भण्डार है। यहाँ नेवेली लिग्नाइट कार्पोरेशन लिमिटेड कोयले का खनन करती है। यह कोयला राजस्थान, गुजरात एवं जम्मू एवं काश्मीर में पाया जाता है।

पेट्रोलियम :

पेट्रोलियम शक्ति के समस्त साधनों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण एवं व्यापक रूप से उपयोगी संसाधन है। आधुनिक युग में कोई भी राष्ट्र इसके बिना अपने अस्तित्व को कायम नहीं रख सकता। पेट्रोलियम शक्ति के स्रोत के साथ-साथ अनेक उद्योगों का कच्चा माल भी है। इससे विभिन्न प्रकार की वस्तुएँ जैसे–गैसोलीन, डीजल, किरासन तेल, स्नेहक, कीटनाशक दवाएँ, दवाएँ, पेट्रोल, साबुन, कृत्रिम रेशा, प्लास्टिक आदि बनाए जाते हैं।

भारतीय भूगर्भ सर्वेक्षण विभाग के अनुमान के अनुसार भारत में पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस के कुल भण्डार 17 अरब टन है। भारत विश्व का मात्र 1 प्रतिशत पेट्रोलियम उत्पादन करता है। भारत में प्रथम बार 1866 में ऊपरी असम घाटी में तेल के कुँए खोदे गये। 1890 में डिगबोई क्षेत्र में तेल मिल गया था। 1959 में खम्भात के तेल क्षेत्र की खोज हुई। 1975 ई० में मुम्बई हाई में तेल का पता चल गया। इसके बाद भारत में पेट्रोलियम के उत्पादन में वृद्धि होने लगी।

तेल क्षेत्रों का वितरण :

भारत में मुख्यतः पाँच तेल उत्पादक क्षेत्र हैं :

1. उत्तरी-पूर्वी प्रदेश : यह देश का सबसे पुराना तेल उत्पादक क्षेत्र है, जहाँ 1866 ई० में तेल के लिए खुदाई शुरू की गई थी। लगभग एक शताब्दी तक यह भारत का एक मात्र तेल उत्पादक क्षेत्र था। ऊपरी असम घाटी, अरूणाचल प्रदेश, नागालैण्ड आदि के विशाल तेल क्षेत्र इसके अन्तर्गत आते हैं। इस क्षेत्र के महत्वपूर्ण उत्पादक डिगबोई, नहरकटिया, मोरान, रुद्रसागर आदि हैं। अरूणाचल प्रदेश का निगरू और नागालैण्ड का बोरहोल्ला तेल क्षेत्र उल्लेखनीय हैं।

2. गुजरात क्षेत्र : यह क्षेत्र खम्भात के बेसिन तथा गुजरात के मैदान में विस्तृत है। यहाँ पहलीबार 1958 में तेल का पता चला था। इसके मुख्य उत्पादक अंकलेश्वर, कलोल, नवगाँव, कोसांबा, मेहसाना आदि हैं।

3. मुम्बई हाई क्षेत्र : यह क्षेत्र मुम्बई तट से 176 किलोमीटर दूर उत्तर-पश्चिम दिशा में अरब सागर में स्थित है। यहाँ 1975 में तेल खोजने का कार्य शुरू हुआ। यहाँ समुद्र में सागर सम्राट

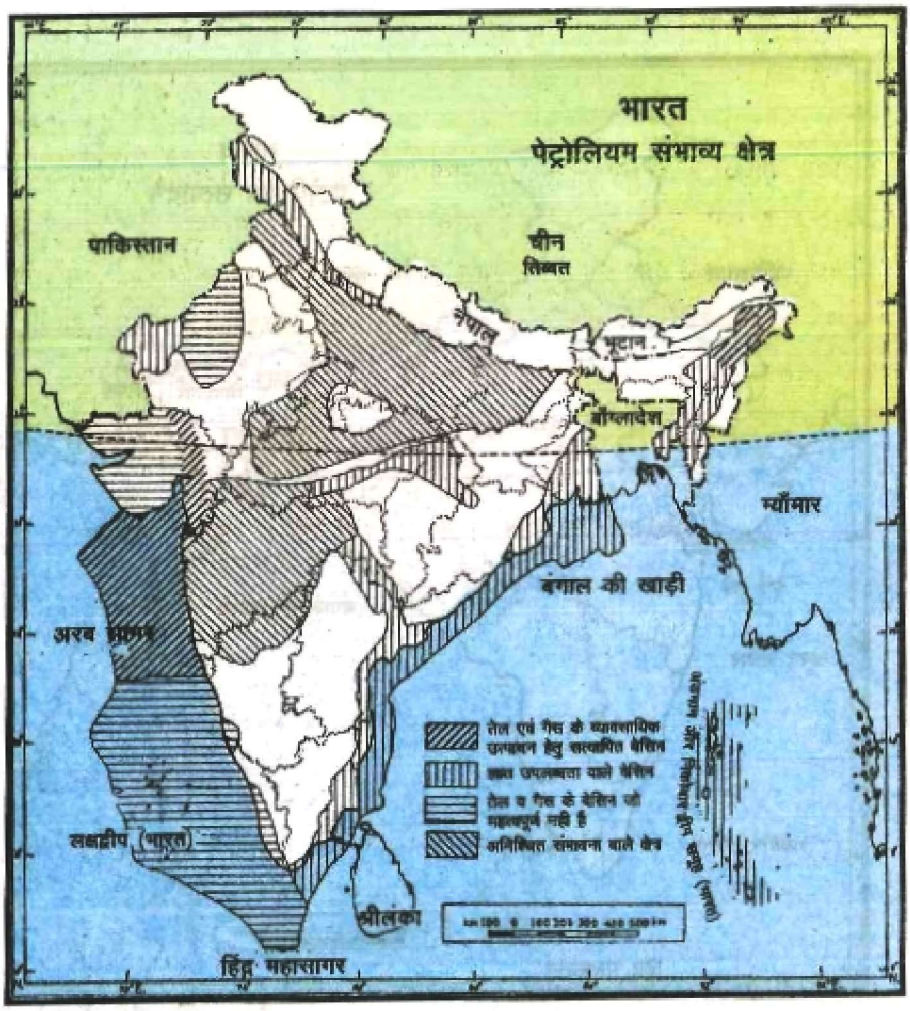

चित्र-1(ङ).4 : भारत : पेट्रोलियम संभाव्य क्षेत्र

नामक मंच बनाया गया है जो एक जलयान है और पानी के भीतर तेल के कुएँ खोदने का कार्य करता है। यहाँ 80 करोड़ टन तेल के भण्डार का अनुमान है। यहाँ का कच्चा तेल पाइप द्वारा स्थल पर पहुँचाकर परिष्कृत किया जाता है। इस क्षेत्र से 2004-05 में 22,424 हजार टन तेल का उत्पादन हुआ जो भारत के कुल उत्पादन का 66 प्रतिशत है।

इस क्षेत्र के दक्षिण एक और तेल क्षेत्र का पता चला है जिसका भण्डार मुम्बई हाई से भी बड़ा है।

चित्र-1 (ङ).5 : भारत में पेट्रोलियम उत्पादन क्षेत्र

4. पूर्वी तट प्रदेश : यह कृष्ण-गोदावरी और कावेरी नदियों के बेसिन तथा मुहाने के समुद्री क्षेत्र में फैला हुआ है। नारीमनम और कोविलत्पल कावेरी प्रदेश के मुख्य तेल क्षेत्र हैं। कुछ समय पूर्व गोदावरी-कृष्णा क्षेत्र में भी तेल की खोज हुई है।

5. बाड़मेर बेसिन : इस बेसिन के मंगला तेल क्षेत्र से सितम्बर 2009 से उत्पादन शुरू हो गया है। यहाँ प्रतिदिन 56000 बैरल तेल का उत्पादन हो रहा है। 2012 तक यह क्षेत्र भारत का 20 प्रतिशत पेट्रोलियम उत्पादन करेगा।

तेल परिष्करण :

कुओं से निकाला गया कच्चा तेल अपरिष्कृत एवं अशुद्ध होता है अत: उपयोग के पूर्व उसे तेल शोधक कारखानों में परिष्कृत किया जाना आवश्यक होता है। उसके बाद ही डीजल, पेट्रोल, किरासन तेल, स्नेहक पदार्थ तथा अन्य कई वस्तुएँ प्राप्त होती हैं। 1901 ई० में भारत का प्रथम तेल शोधक कारखाना असम के डिगबोई में स्थापित हुआ था। 1954 ई० में दूसरी परिष्करणशाला मुम्बई में स्थापित किया गया। इसके बाद तेल शोधन में भारत ने काफी विकास किया है। आज देश में 18 तेल परिष्करणकेन्द्र कार्य कर रही हैं।

प्राकृतिक गैस :

प्राकृतिक गैस हमारे वर्त्तमान जीवन में बड़ी तेजी से एक महत्वपूर्ण ईंधन बनता जा रहा है। इसका उपयोग विभिन्न उद्योगों में मशीन को चलाने में, विद्युत उत्पादन में, खाना पकाने में तथा मोटर गाड़ियाँ चलाने में किया जा रहा है।

भारत में एक अनुमान के अनुसार प्राकृतिक गैस की संचित राशि 700 अरब घन मीटर है। वर्ष 1984-85 में कुल उत्पादन 723 करोड़ घन मीटर था जो 2004-05 में बढ़कर 3082 करोड़ घन मीटर हो गया।

प्राय: पेट्रोलियम उत्पादक क्षेत्र से ही प्राकृतिक गैस भी मिलते हैं। 1984 में प्राकृतिक गैस प्राधिकरण की स्थापना देश के प्राकृतिक गैसों के परिवहन, वितरण एवं विपणन हेतु किया गया जो 5340 किलोमीटर गैस पाइप लाइन द्वारा देश भर में फैले उपभोक्ताओं की आवश्यकता की पूर्ति करता है।

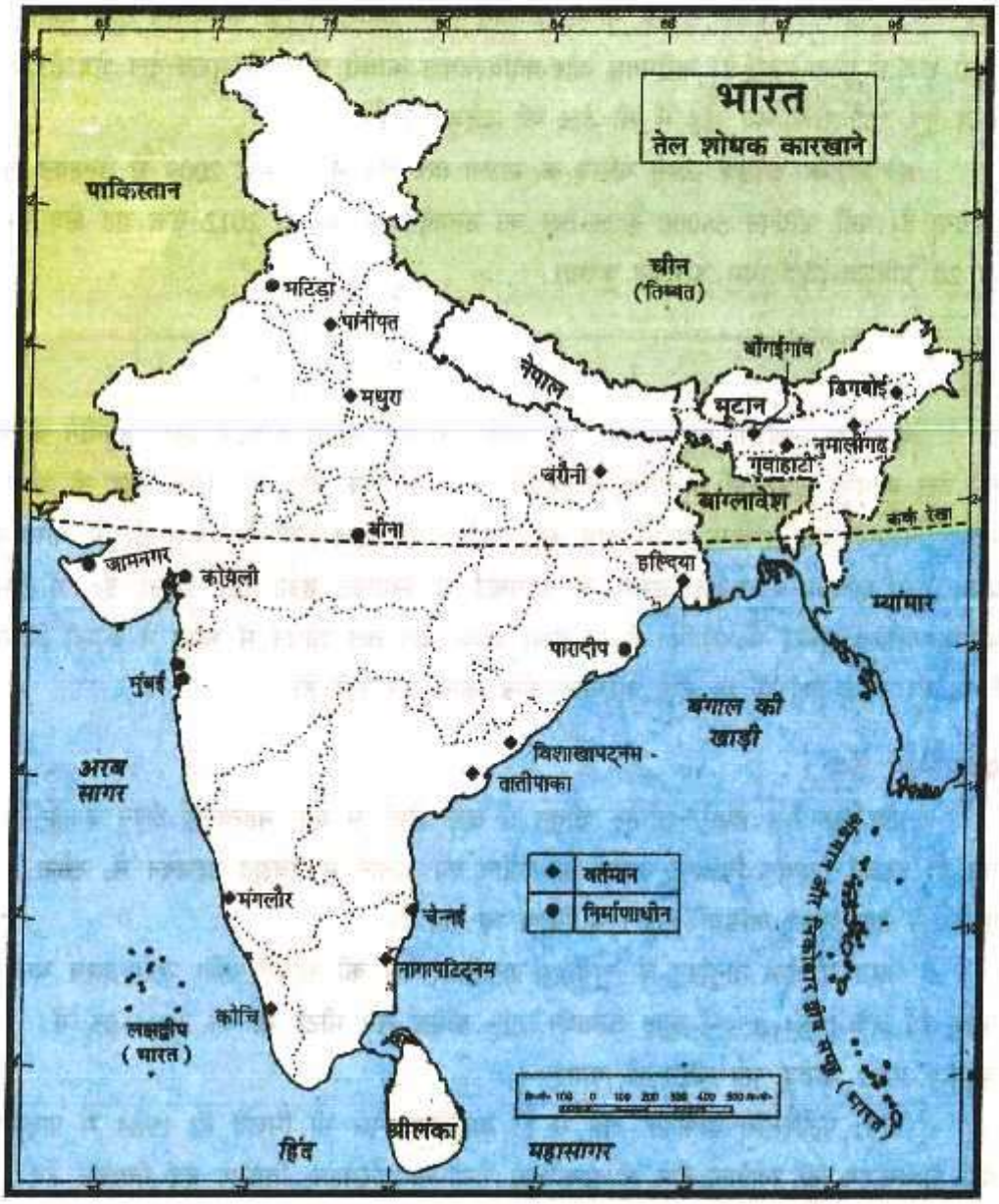

चित्र-1 (ङ).6 भारत के तेल शोधक कारखाने

विद्युत शक्ति :

विद्युत शक्ति ऊर्जा का एक महत्वपूर्ण स्रोत वर्त्तमान विश्व में विद्युत के प्रति-व्यक्ति उपभोग को विकास का एक सूचकांक माना जाता है। प्रवाहमय जल स्रोत से उत्पन्न शक्ति को जल विद्युत कहते हैं। जब विद्युत के उत्पादन में कोयला, पेट्रोलियम या प्राकृतिक गैस से प्राप्त उष्मा का उपयोग किया जाता है तो उसे ताप विद्युत कहते हैं। इसके अतिरिक्त विद्युत का उत्पादन आण्विक खनिजों के विखण्डन से भी किया जाता है। जिसे परमाणु विद्युत कहा जाता है। यह भी ताप विद्युत का ही एक रूप है।

जल विद्युत :

परम्पराओं से जल का प्रयोग शक्ति संसाधन के रूप में किया जाता रहा है। प्रारम्भ में जल से ऊर्जा प्राप्त करने की प्रक्रिया पवन चक्रियों द्वारा की जाती थी। किन्तु 20वीं सदी में सीमेंट, डायनेमो तथा पोर्टलैण्ड सीमेंट द्वारा नदियों को बाँधने की प्रक्रिया का आविष्कार ने जल विद्युत के विकास को तीव्रतर बना दिया। जल एक अक्षयशील एवं नवीकरणीय संसाधन है जिससे उत्पन्न शक्ति प्रदूषण मुक्त होती है।

जल विद्युत उत्पादन के लिए सदावाहिनी नदी में प्रचुर जल की राशि, नदी मार्ग में ढाल, जल का तीव्र वेग, प्राकृतिक जल-प्रपात का होना अनुकूल भौतिक दशाएँ हैं जो पर्वतीय एवं हिमानीकृत क्षेत्रों में पाया जाता है। इसके उत्पादन की आर्थिक दशाएँ, जैसे–सघन औद्योगिक, विकास, वाणिज्यिक विकास एवं आबाद क्षेत्रों, जैसो, बाजार, पर्याप्त पूंजी निवेश, परिवहन के साधन, प्राविधिक ज्ञान एवं ऊर्जा के अन्य स्रोतों का अभाव प्रमुख है।

भारत में सन् 1897 ई० में दार्जिलिंग में प्रथम जल विद्युत संयंत्र की स्थापना हुई थी। इसके बाद कर्नाटक के शिवसमुद्रम् में कावेरी नदी के जल प्रपात पर दूसरे जल विद्युत संयंत्र की स्थापना हुई। 1930 तक पश्चिम घाट पर्वतीय क्षेत्र, उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, तमिलनाडु एवं कर्नाटक आदि राज्यों में कई जल विद्युत संयंत्र स्थापित हो चुके थे। 1947 तक भारत में 508 मेगावाट बिजली उत्पादन की जाने लगी। इसके पश्चात स्वतंत्र भारत में पंचवर्षीय योजनाओं के तहत इस दिशा में सघन प्रयास किये गये। कई बहुउद्देशीय योजनाओं को संचालित किया गया ताकि विद्युत शक्ति का समुचित और शीघ्र विकास हो सके।

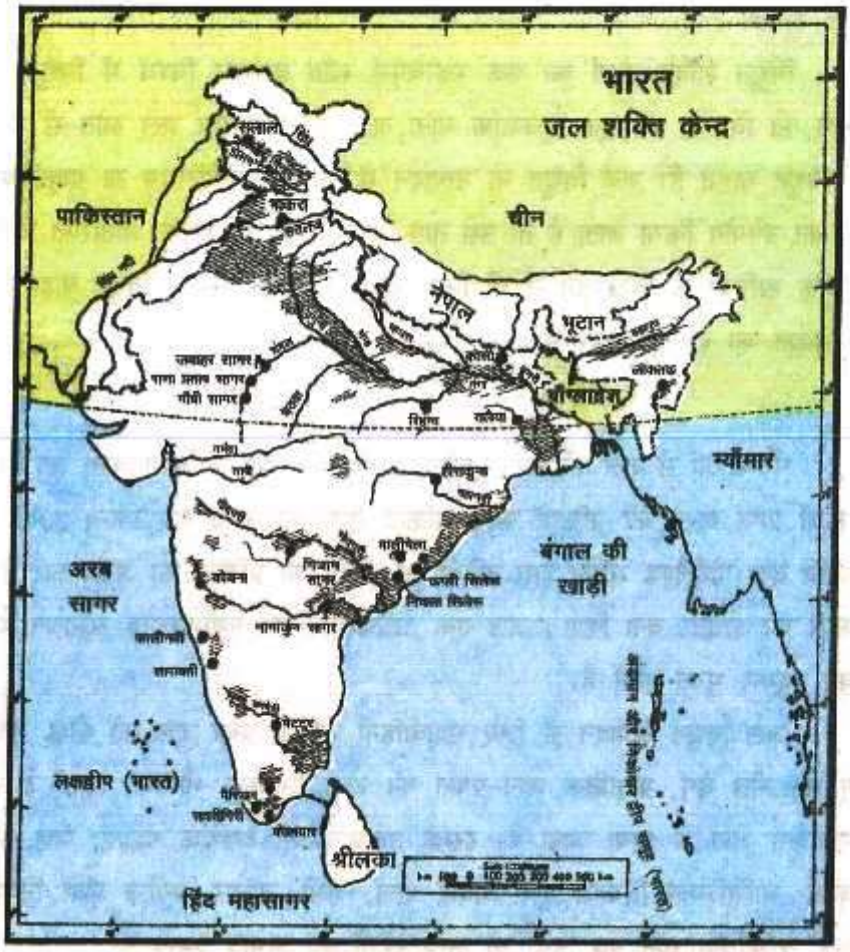

मानचित्र जल शक्ति केन्द्र

वितरण एवं मुख्य जल-विद्युत परियोजनाएँ :

नदियों पर बराज बनाकर ऐसा उपाय करना जिससे सिंचाई के साथ बिजली उत्पन्न करना (पन बिजली), बाढ़ की रोकथाम करना, मिट्टी का कटाव रोकना, मछली पालन, नहर के निर्माण द्वारा यातायात की सुविधा बढ़ाना और पर्यटन उद्योग हेतु

2003-04 में विद्युत उत्पादन (बिलियन यूनिटन में)	
तापीय विद्युत	467
जल विद्युत	64
परमाणु	17
कुल	548

ABDIEL SOLUTIONS ABSOL PATNA

रमणिक स्थानों का निर्माण आदि अनेक लाभ एक ही समय साथ-साथ लिए जा सके तो ऐसी परियोजना बहुमुखी, बहुधंधी या बहुउद्देशीय परियोजना कहलाती है। भारत में ऐसी मुख्य परियोजनाओं का अध्ययन जल शक्ति के वितरण पर प्रकाश डालते हैं।

क्या आप जानते हैं?

विद्युत के यर्थाथ स्थापित क्षमता और वास्तविक उत्पादन के बीच अन्तर बना रहता है। विद्युत उत्पादन और उपयोग को यूनिट में भी बताया जा सकता है। एक यूनिट का अर्थ है 1000 वाट बिजली का एक घंटा तक इस्तेमाल।

1. भाखड़ा-नंगल परियोजना : सतलज नदी पर हिमालय क्षेत्र में विश्व के सर्वोच्च बांधों में एक भाखड़ा बाँध की ऊँचाई 225 मीटर है। यह भारत की सबसे बड़ी परियोजना है, जहाँ चार शक्ति-गृह बनाये गये हैं। एक भाखड़ा में, दो गंगुवाल में और एक कोटला में स्थापित होकर 7 लाख किलोवाट विद्युत उत्पादन कर पंजाब, हरियाण, दिल्ली, उत्तराखण्ड, उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, राजस्थान तथा जम्मू व कश्मीर राज्यों के कृषि एवं उद्योगों में क्रांतिकारी परिवर्त्तन ला दिया है।

2. दामोदरघाटी परियोजना : यह परियोजना दामोदर नदी के भयंकर बाढ़ से झारखण्ड एवं पश्चिम बंगाल को बचाने के साथ-साथ तिलैया, मैथन, कोनार और पंचेत पहाड़ी में बाँध बनाकर 1300 मेगावाट जल विद्युत उत्पन्न करने में सहायक है। इसका लाभ बिहार, झारखण्ड एवं पश्चिम बंगाल को प्राप्त है। इस परियोजना के निगम द्वारा ताप विद्युत का भी उत्पादन किया जाता है।

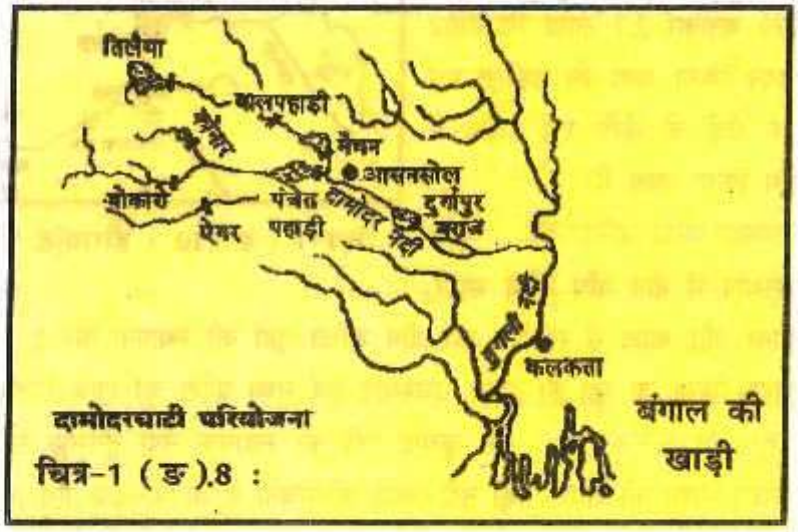

चित्र-1 (ङ).8 :

3. **कोशी परियोजना** : उत्तर बिहार का अभिशाप कोशी नदी पर हनुमान नगर (नेपाल) में बाँध बनाकर 20000 किलोवाट बिजली उत्पादन किया जा रहा है जिसकी आधी बिजली नेपाल को तथा शेष बिहार को प्राप्त होती है।

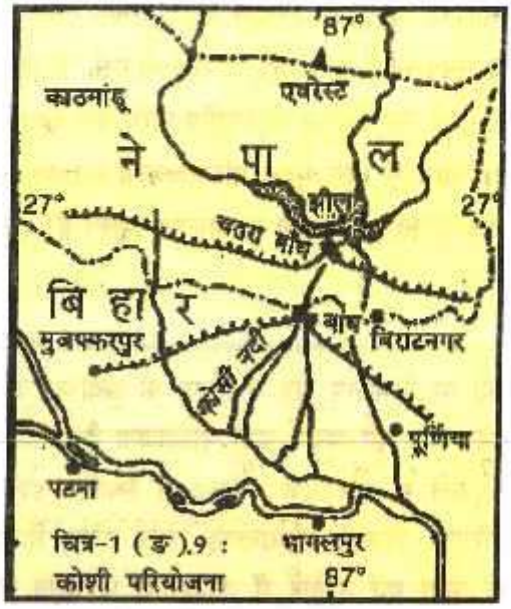

चित्र-1 (ङ).9 : कोशी परियोजना

4. **रिहन्द परियोजना** : सोन की सहायक नदी रिहन्द पर उत्तर प्रदेश में 934 मीटर लम्बा बाँध और कृत्रिम झील 'गोविन्द बल्लभ पंत सागर'' का निर्माण कर बिजली उत्पादित की जाती है। इस योजना के अन्तर्गत 30 लाख किलोवाट विद्युत उत्पन्न करने की क्षमता है। यहाँ के बिजली का उपयोग रेणुकूट के अल्यूमिनियम उद्योग, चुर्क के सीमेंट उद्योग, मध्य भारत के रेल मार्गों को विद्युतिकरण तथा हजारों नलकूपों के लिए किये जाते हैं।

5. **हीराकुड परियोजना** : महानदी पर उड़ीसा में विश्व का सबसे लम्बा बाँध (4801 मीटर) बनाकर 2.7 लाख किलोवाट बिजली उत्पादन किया जाता है। उड़ीसा एवं आस-पास के क्षेत्रों के कृषि एवं उद्योग में इसका उपयोग किया जाता है।

चित्र-1 (ङ).10 : हीराकुंड परियोजना

6. **चंबल घाटी परियोजना** : चंबल नदी पर राजस्थान में तीन बाँध गाँधी सागर, राणाप्रताप सागर और कोटा में स्थापित कर तीन शक्ति गृहों की स्थापना कर 2 लाख मेगावाट बिजली उत्पादन किया जा रहा है। इससे राजस्थान एवं मध्य प्रदेश को लाभ मिलता है।

7. **तुंगभद्रा परियोजना** : यह कृष्णा नदी की सहायक नदी तुंगभद्रा पर कर्नाटक में अवस्थित दक्षिण भारत की सबसे बड़ी नदी-घाटी-परियोजना है जो कर्नाटक एवं आन्ध्र प्रदेश के

सहयोग से तैयार हुआ है। इसकी बिजली उत्पादन क्षमता 1 लाख किलोवाट है जो सिंचाई के साथ-साथ सैकड़ों छोटे-बड़े उद्योगों को बिजली आपूर्ति करता है।

8. शारवती नदी परियोजना : कर्नाटक में पश्चिम घाट की शारवती नदी पर जोग प्रपात के पास 2160 मीटर लम्बा एवं 62 मीटर ऊँचा बाँध बनाकर बिजली उत्पन्न किया जाता है। इसकी विद्युत उत्पादन क्षमता बढ़ाकर 13 लाख किलोवाट करने की योजना है। इससे लाभान्वित राज्य कर्नाटक, केरल, आन्ध्रप्रदेश, तमिलनाडु और महाराष्ट्र हैं।

ताप शक्ति :

ताप शक्ति संयंत्रों में तापीय विद्युत का उत्पादन करने के लिए कोयला, पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस का उपयोग होता है। ये जीवाश्म इंधन भी कहे जाते हैं तथा समाप्य संसाधन हैं।

चित्र-1 (ङ).11 भारत : प्रमुख विद्युत गृह

ये जल विद्युत की भाँति प्रदूषण रहित नहीं हैं। भारत में 1997-98 तक ताप विद्युत का उत्पादन 64 हजार मेगावाट हुआ जो 33.6 अरब यूनिट के बराबर था। 2004 तक यह बढ़कर 784921 मेगावाट हो गया जो 467 बिलियन यूनिट के बराबर है। राष्ट्रीय ताप विद्युत निगम (NTPC) द्वारा देश का अधिकतर ताप विद्युत/शक्ति उत्पादन का कार्य होता है।

परमाणु शक्ति :

जब उच्च अणुभार वाले परमाणु विखंडित होते हैं तो ऊर्जा का उत्सर्जन होता है। इल्मेनाइट, बैनेडियम, एंटीमनी, ग्रेफाइट, यूरेनियम, मोनाजाइट आदि आण्विक खनिज हैं। भारत में

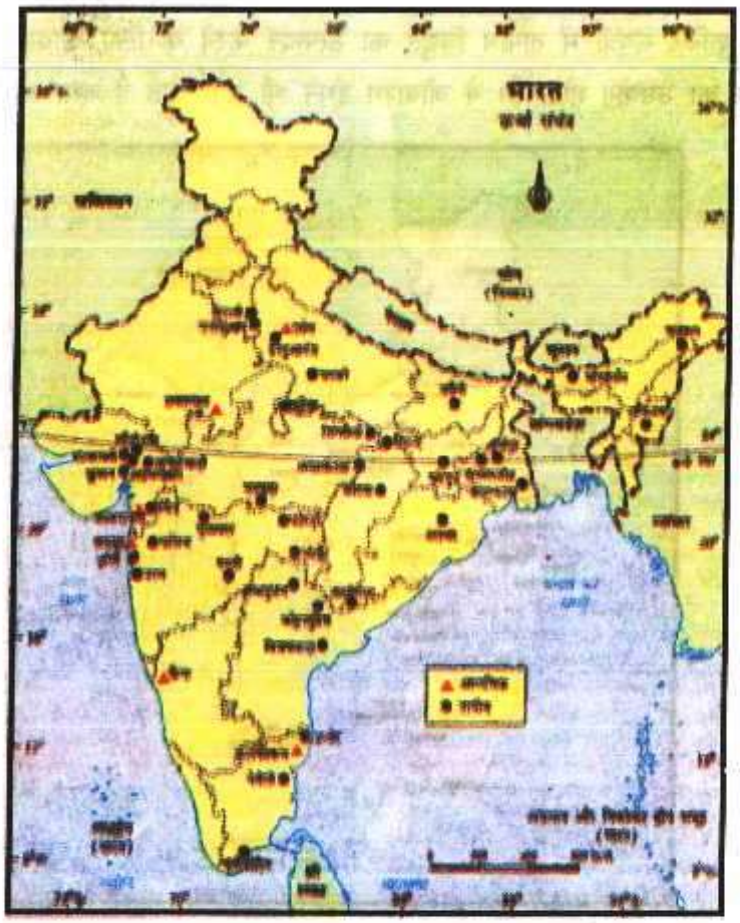

चित्र-1 (ङ).12 : भारत–प्रमुख ऊर्जा संयंत्र

मोनाजाइट केरल राज्य में प्रचुरता से पाया जाता है। इसके अतिरिक्त तमिलनाडु, आन्ध्र प्रदेश, उड़ीसा आदि के तटीय क्षेत्रों में यह प्राप्य है। यूरेनियम परमाणु ऊर्जा का कच्चा माल है जो विभिन्न प्रकार की प्राचीन शैलों से प्राप्त किया जाता है, इनमें पिचब्लेंड मुख्य है जिसमें 50 से 80 प्रतिशत तक यूरेनियम पाया जाता है।

भारत में यूरेनियम का विशाल भंडार झारखण्ड के जादूगोड़ा में है जहाँ यह 97 किलो मीटर लम्बी पट्टी में फैला है। मेघालय के जयंतिया पहाड़ी में भी इसके पर्याप्त भण्डार हैं। आन्ध्रप्रदेश में भी यूरेनियम पाया जाता है। इल्मेनाइट का भण्डार केरल, तमिलनाडु, आन्ध्रप्रदेश, उड़ीसा और महाराष्ट्र में स्थित है। ये खनिज भी समुद्रतटीय बालु में पाये जाते हैं। बेनेडियम झारखण्ड तथा उड़ीसा में मिलता है।

भारत में 1955 में प्रथम आण्विक रियेक्टर मुम्बई के निकट तारापुर में स्थापित किया गया जिसका मुख्य उद्देश्य उद्योग एवं कृषि को बिजली प्रदान करना था। देश में अभी तक छः परमाणु विद्युतगृह स्थापित हुए हैं।

1. तारापुर परमाणु विद्युत गृह : यह एशिया का सबसे बड़ा परमाणु विद्युत गृह है। यहाँ जल उबालने वाली दो परमाणु भट्टियाँ हैं जिसमें प्रत्येक की उत्पादन क्षमता 200 मेगावाट से अधिक है। अब यहाँ यूरेनियम के स्थान पर थोरियम से प्लुटोनियम बनाकर विद्युत उत्पन्न किये जा रहें हैं क्योंकि भारत थोरियम के भण्डार में काफी समृद्ध है।

2. राणाप्रताप सागर परमाणु विद्युत गृह : यह राजस्थान के कोटा में स्थापित है। यह चंबल नदी के किनारे है जिससे जल प्राप्त होता है। यह बिजली घर कनाडा के सहयोग से बना है। इसका उत्पादन क्षमता 100 मेगावाट है। फिलहाल 235 मेगावाट की दो नई इकाइयों की भी शुरूआत हुई है।

3. कलपक्कम परमाणु विद्युत गृह : तमिलनाडु में स्थित यह परमाणु गृह स्वदेशी प्रयास से बना है। यहाँ 335 मेगावाट की दो रिएक्टर क्रमशः 1983 एवं 1985 से कार्य करना शुरू कर दिया है।

ARDIEL SOLUTIONS ABSOL PATNA

4. नरौरा परमाणु विद्युत गृह : यह उत्तर प्रदेश के बुलंदशहर के पास स्थित है। यहाँ भी 235 मेगावाट क्षमता के दो रिएक्टर हैं।

5. ककरापारा परमाणु विद्युत गृह : गुजरात राज्य में समुद्र के किनारे स्थित इस परमाणु विद्युत गृह में 1992 से विद्युत उत्पादन प्रारम्भ हुआ है।

6. कैगा परमाणु विद्युत गृह : यह कर्नाटक राज्य के जागवार जिला में स्थित है।

7. कुडनकूलम परमाणु विद्युत गृह : इस परमाणु विद्युत गृह का निर्माण रूस के सहयोग से तमिलनाडु के तूतीकोरिन बन्दरगाह के निकट चल रहा है। अभी यह निर्माणाधिन है। वर्ष 2010 के मध्य तक उत्पादन प्रारम्भ होने की संभावना है।

गैर-पारम्परिक शक्ति के स्त्रोत

हमलोग अधिक दिनों तक **पारम्परिक** शक्ति के साधनों पर निर्भर नहीं रह सकते क्योंकि ये समाप्य संसाधन हैं। अतः गैर-पारम्परिक शक्ति संसाधनों से ऊर्जा के विकास की बहुत ही अधिक आवश्यकता है। ऊर्जा के गैर-पारम्परिक स्त्रोतों में बायो गैस, सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, ज्वारीय एवं तरंग ऊर्जा, भूतापीय ऊर्जा एवं जैव ऊर्जा महत्वपूर्ण हैं। भारत इस समय विश्व का ऐसा देश है जिसने ऊर्जा नवीकरणीय गैर-पारम्परिक स्त्रोतों का उपयोग करने के लिए प्रौद्योगिकी विकसित कर ली है। गैर-पारम्परिक ऊर्जा के स्त्रोत सर्वथा प्रदूषण मुक्त होते हैं।

सौर ऊर्जा : जब फोटोवोल्टाइक सेलों में विपाशित सूर्य की किरणों को ऊर्जा में परिवर्तित किया जाता है, तो सौर ऊर्जा का उत्पादन होता है। यह कम लागत वाला पर्यावरण के अनुकूल तथा निर्माण में आसान होने के कारण अन्य ऊर्जा के स्त्रोतों की अपेक्षा ज्यादा लाभदायक है। यह सामान्यतः हीटरों, कुलर्स, प्रकाश आदि उपकरणों में अधिक उपयोग की जाती है। भारत के पश्चिमी भागों-गुजरात, राजस्थान में सौर ऊर्जा की अधिक संभावनाएँ हैं।

ABSOLUTE SOLUTIONS ABSOL PATNA

पवन ऊर्जा : पवन ऊर्जा पवन चक्कियों की सहायता से प्राप्त की जाती है। पवन चक्की पवन की गति से चलती है और टरबाइन को चलाती है। इससे गति ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा में परिवर्तित किया जाता है। भारत विश्व का सबसे बड़ा पवन ऊर्जा उत्पादक देश है। यहाँ मानसून एवं पछुआ पवनों को ऊर्जा के स्रोत के रूप में प्रयोग किया जाता है। इसके अतिरिक्त स्थानीय पवनों, स्थलीय एवं समुद्री समिरों को भी विद्युत उत्पादन में प्रयोग किया जा सकता है।

चित्र-1 (ङ).13 : पवन चक्की

भारत में पवन ऊर्जा के विकास के लिए बहुत बड़ी महत्त्वाकांक्षी योजना तैयार की गई है जिसके अन्तर्गत 300 वायु चालित टरबाइनों को विशेषतया सागर तटीय क्षेत्रों के 12 अनुकूल स्थानों पर स्थापित किये जायेंगे। देश में पवन ऊर्जा की संभावित उत्पादन क्षमता 50,000 मेगावाट है। मार्च 2006 तक 5340 मेगावाट विद्युत का उत्पादन किया जा चुका है। पवन ऊर्जा के लिए तमिलनाडु, राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र तथा कर्नाटक में अनुकूल परिस्थितियाँ विद्यमान हैं। गुजरात के कच्छ में लाम्बा का पवन ऊर्जा संयंत्र एशिया का सबसे बड़ा संयंत्र है। दूसरा बड़ा संयंत्र तमिलनाडु के तूतीकोरिन में स्थित है।

ज्वारीय तथा तरंग ऊर्जा : समुद्रि ज्वार तथा तरंग में जल गतिशील रहता है। अतः इसमें अपार ऊर्जा रहती है। अनुमान है कि भारत में 8,000-9,000 मेगावाट संभाव्य ज्वारीय एवं तरंग ऊर्जा है। खम्भात की खाड़ी सबसे अनुकूल है जहाँ पर 7,000 मेगावाट ऊर्जा प्राप्त किया जा सकता है। इसके बाद कच्छ की खाड़ी (1000 मेगावाट) तथा सुन्दर वन (100 मेगावाट) का स्थान है।

भूतापीय ऊर्जा : यह ऊर्जा पृथ्वी के उच्च ताप से प्राप्त किया जाता है। जब भूगर्भ से मैग्मा निकलता है तो अपार ऊर्जा निर्मुक्त होता है। गीजर कूपों से निकलने वाले गर्म जल तथा

गर्म झरनों से भी शक्ति प्राप्त किया जा सकता है। हिमाचल प्रदेश के मनीकरण में भूतापीय ऊर्जा संयंत्र स्थापित है तथा दूसरा लद्दाख के दुर्गाघाटी में स्थित है।

बायो गैस एवं जैव ऊर्जा : ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि अपशिष्ट, पशुओं और मानव जनित अपशिष्ट के उपयोग से घरेलू उपयोग हेतु बायो गैस उत्पन्न की जाती है। वस्तुत: जैविक पदार्थों के अपघटन से गैस उत्पन्न होती है। पशुओं के गोबर से गैस तैयार करने वाले संयंत्र को भारत में **गोबर गैस प्लांट** के नाम से जाना जाता है। इससे किसानों को ऊर्जा तथा उर्वरक की प्राप्ति होती है। जैविक पदार्थों से प्राप्त होने वाली ऊर्जा को जैविक ऊर्जा कहते हैं। कृषि अवशेष, नगरपालिका, औद्योगिक एवं अन्य अपशिष्ट पदार्थ जैविक पदार्थों के उदाहरण हैं। इसे विद्युत ऊर्जा, ताप ऊर्जा या खाना पकाने के लिए गैस ऊर्जा में परिवर्तित किया जा सकता है। इससे कूड़ा-करकट का सफाया एवं पर्यावरण के प्रदूषण जैसी समस्याएँ भी हल हो सकती हैं। कचरे को ऊर्जा में बदलने की एक परियोजना दिल्ली के ओखला में शुरू की गई है।

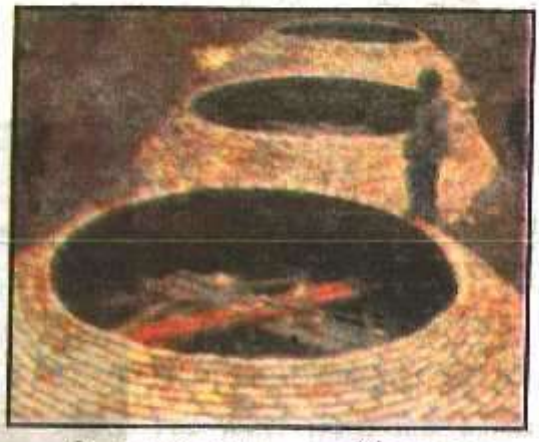

चित्र-1 (ङ).14 : बायोगैस संयंत्र

शक्ति संसाधनों का संरक्षण :

ऊर्जा संकट एक विश्व-व्यापी समस्या का रूप ले चुका है। इस परिस्थिति में समस्या के समाधान की दिशा में अनेक प्रयास किये जा रहे हैं।

1. ऊर्जा के प्रयोग में मितव्ययीता : ऊर्जा संकट से बचने के लिए प्रथमत: ऊर्जा के उपयोग में मितव्ययीता बरती जाय। इसके लिए तकनीकी विकास आवश्यक है। ऐसे मोटर गाड़ियों का निर्माण हो जो कम तेल में ज्यादा चलते हैं। अनावश्यक बिजली का उपयोग रोक कर हम ऊर्जा की बचत बड़े स्तर पर कर सकते हैं।

2. ऊर्जा के नवीन क्षेत्रों की खोज : ऊर्जा संकट समाधान की दिशा में परम्परागत ऊर्जा के नये क्षेत्रों का अन्वेषण किया जाय। इस दिशा में भारत में 1970 के बाद काफी तेजी आई है तथा अनेक नये-नये पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस के भण्डार का पता लगाया जा चुका है। अरब सागर, कृष्णा-गोदावरी क्षेत्र, राजस्थान क्षेत्र आदि में पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस के स्रोत प्राप्त हुए हैं। इसके लिए सुदूर-संवेदी सूचना प्रणाली का भी उपयोग हो रहा है।

3. ऊर्जा के नवीन वैकल्पिक साधनों का उपयोग : वैकल्पिक ऊर्जा में पारम्परिक एवं गैर-पारम्परिक दोनों ऊर्जा ही सम्मिलित हैं। इन में से कुछ तो सतत् नवीकरणीय हैं तो कुछ समापनीय हैं। आज वैकल्पिक ऊर्जा में जल-विद्युत, पवन-ऊर्जा, ज्वारीय ऊर्जा, जैव ऊर्जा, भूतापीय ऊर्जा, सौर ऊर्जा आदि का विकास कर उपभोग करना शक्ति के संसाधनों को संरक्षित करने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम होगा। जीवाश्म ऊर्जा के अत्यधिक उपयोग से प्रदूषण, स्वास्थ्य एवं जलवायु परिवर्तन की आशंका प्रबल हो गई है। अत: इसके स्थान पर वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतों का उपयोग अपरिहार्य हो गया है।

4. अंतर्राष्ट्रीय सहयोग : ऊर्जा संकट से बचने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग की आवश्यकता है। विश्व के सभी राष्ट्र आपसी भेद-भाव को भुलकर ऊर्जा संकट समाधान हेतु आम सहमति से नीति निर्धारण करें नहीं तो आनेवाले दिनों में यह विश्व के लिए दु:खदायी सिद्ध होगा। इस संदर्भ में संयुक्त राष्ट्र संघ (U.N.O.), ऑर्गेनाइजेशन ऑफ पेट्रोलियम एक्सपोर्टिंग कन्ट्रीज (OPEC), विश्व व्यापार संगठन (W.T.O.) दक्षिण एशियाई 8 देशों का संगठन (G-8) जैसी अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाऐं महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती हैं।

अभ्यास प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न :

1. किस राज्य में खनिज तेल का विशाल भंडार स्थित है?

   (क) असम (ख) राजस्थान

   (ग) बिहार (घ) तमिलनाडु

2. भारत के किस स्थान पर पहला परमाणु ऊर्जा केन्द्र स्थापित किया गया था?

   (क) कलपक्कम (ख) नरोरा

   (ग) राणाप्रताप सागर (घ) तारापुर

3. कौन सा ऊर्जा स्रोत अनवीकरणीय है?

   (क) जल (ख) सौर

   (ग) कोयला (घ) पवन

4. प्राथमिक ऊर्जा का उदाहरण नहीं है +

   (क) कोयला (ख) विद्युत

   (ग) पेट्रोलियम (घ) प्राकृतिक गैस

5. ऊर्जा का गैर-पारम्परिक स्रोत है।

   (क) कोयला (ख) विद्युत

   (ग) पेट्रोलियम (घ) सौर-ऊर्जा

6. गोण्डवाना समूह के कोयले का निर्माण हुआ था।

   (क) 20 करोड़ वर्ष पूर्व (ख) 20 लाख वर्ष पूर्व

   (ग) 20 हजार वर्ष पूर्व (घ) इनमें से कोई नहीं

7. भारत में कोयले का सर्वप्रमुख उत्पादक राज्य है :

(क) पश्चिम बंगाल (ख) झारखण्ड

(ग) उड़ीसा (घ) छत्तीसगढ़

8. सर्वोत्तम कोयले का प्रकार कौन-सा है?

(क) एन्थ्रासाइट (ख) पीट

(ग) लिग्नाइट (घ) बिटुमिनस

9. मुम्बई हाई क्यों प्रसिद्ध है?

(क) कोयले के निर्यात हेतु (ख) तेल शोधक कारखाना हेतु

(ग) खनिज तेल हेतु (घ) परमाणु शक्ति हेतु

10. भारत का प्रथम तेल शोधक कारखाना कहाँ स्थित है?

(क) मथुरा (ख) बरौनी

(ग) डिगबोई (घ) गुवाहाटी

11. प्राकृतिक गैस किस खनिज के साथ पाया जाता है?

(क) यूरेनियम (ख) पेट्रोलियम

(ग) चूना पत्थर (घ) कोयला

12. भाखड़ा नंगल परियोजना किस नदी पर अवस्थित है?

(क) नर्मदा (ख) झेलम

(ग) सतलज (घ) व्यास

13. दक्षिण भारत की सबसे बड़ी नदी घाटी परियोजना है।

(क) तुंगभद्रा (ख) शारवती

(ग) चंबल (घ) हिराकुंड

14. ताप विद्युत केन्द्र का उदाहरण है :

(क) गया (ख) बरौनी

(ग) समस्तीपुर (घ) कटिहार

15. यूरेनियम का प्रमुख उत्पादक स्थल है :

(क) डिगबोई (ख) झरिया

(ग) घाटशीला (घ) जादूगोड़ा

16. एशिया का सबसे बड़ा परमाणु विद्युत गृह है :

(क) तारापुर (ख) कलपक्कम

(ग) नरौरा (घ) कैगा

17. भारत के किस राज्य में सौर-ऊर्जा के विकास की सर्वाधिक संभावनाएँ हैं?

(क) असम (ख) अरूणाचल प्रदेश

(ग) राजस्थान (घ) मेघालय

18. ज्वारीय एवं तरंग ऊर्जा उत्पादन हेतु भारत के अधिक अनुकूल परिस्थितियाँ कहाँ पाई जाती है?

(क) मन्नार की खाड़ी में (ख) खम्भात की खाड़ी में

(ग) गंगा नदी में (घ) कोसी नदी में

लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. पारम्परिक एवं गैर-पारम्परिक ऊर्जा स्रोतों के तीन-तीन उदाहरण लिखिये।
2. गोण्डवाना समूह के कोयला क्षेत्रों के नाम लिखिये।
3. झारखण्ड राज्य के मुख्य कोयला उत्पादक क्षेत्रों के नाम अंकित कीजिये।
4. कोयले के विभिन्न प्रकारों के नाम लिखिये।
5. पेट्रोलियम से किन-किन वस्तुओं का निर्माण होता है?

ABSOL SOLUTIONS PATNA

6. सागर सम्राट क्या है?
7. किन्ही चार तेल शोधक कारखाने का स्थान निर्दिष्ट कीजिये।
8. जल विद्युत उत्पादन के कौन-कौन से मुख्य कारक हैं?
9. नदी घाटी परियोजनाओं को बहुउद्देशीय क्यों कहा जाता है?
10. निम्नलिखित नदी घाटी परियोजनाएँ किन-किन राज्यों में अवस्थित हैं–
    हीराकुंड, तुंगभद्रा एवं रिहन्द।
11. ताप शक्ति क्यों समाप्य संसाधन है?
12. परमाणु शक्ति किन-किन खनिजों से प्राप्त होता है?
13. मोनाजाइट भारत में कहाँ-कहाँ उपलब्ध है?
14. सौर ऊर्जा का उत्पादन कैसे होता है?
15. भारत के किन-किन क्षेत्रों में पवन ऊर्जा के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ हैं?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न :

1. शक्ति संसाधन का वर्गीकरण विभिन्न आधारों के अनुसार, सोदाहरण, स्पष्ट कीजिये?
2. भारत में पारम्परिक शक्ति के विभिन्न स्रोतों का विवरण प्रस्तुत कीजिये?
3. गोंडवाना काल के कोयले का भारत में वितरण पर प्रकाश डालिये?
4. कोयले का वर्गीकरण कर उनकी विशेषताओं को स्पष्ट कीजिये?
5. भारत में खनिज तेल के वितरण का वर्णन कीजिये?
6. जल विद्युत उत्पादन हेतु अनुकूल भौगोलिक एवं आर्थिक कारकों की विवेचना कीजिये?
7. संक्षिप्त भौगोलिक टिप्पणी लिखिये–
    भाखड़ा-नंगल परियोजना, दामोदर घाटी परियोजना, कोसी परियोजना, हीराकुंड परियोजना, रिहन्द परियोजना और तुंगभद्रा परियोजना।
8. भारत के किन्हीं चार परमाणु विद्युत गृह का उल्लेख कीजिये तथा उनकी विशेषताओं को स्पष्ट कीजिये?

9. शक्ति (ऊर्जा) संसाधनों के संरक्षण हेतु कौन-कौन कदम उठाये जा सकते हैं? आप उसमें कैसे मदद पहुँचा सकते हैं?

मानचित्र कार्य :

भारत के मानचित्र पर निम्नलिखित को दिखाइए और उनके नाम लिखिये :

1. कोयला खदानें : झरिया, बोकारो, रानीगंज, कोरबा, तालचर, सिंगरेनी एवं नेवेली।
2. तेल क्षेत्र : डिगबोई, कलोल, अंकलेश्वर, मुम्बई हाई।
3. तेलशोधक कारखाने: भटिंडा, पानीपत, मथुरा, जामनगर, मंगलौर, हल्दिया, गुवाहाटी, बरौनी।
4. परमाणु शक्ति केन्द्र : कैगा, कालपक्कम, रावतभाटा, नरौरा, काकरापारा, तारापुर।